Ancient Powars



प्राचीन पोंवार

प्राचीन पोवार

लेखक
इंजी. महेन पटले,

प्राचीन पोवार

Prachin Powar

-: लेखक :-

इंजी. महेन पटले,

नागपूर.

-: मुखपृष्ठ :-

इंजी. महेन पटले

प्रथमावृत्ती : ०१/११/२०२५

Google Identifier code - GGKEY:QHPG22L5ERC

मूल्य- नि:शुल्क

अनुक्रमिका

१. पोवार इतिहास

यह पुस्तक सन् २०२१ में प्रकाशित "पोवार" नामक कृति की अगली कड़ी है। उस प्रथम कृति का उद्देश्य पोवार या पंवार क्षत्रिय समुदाय के छत्तीस कुलों के प्राचीन स्वरूप और उनके ऐतिहासिक अस्तित्व को उजागर करना था। प्राचीन ग्रंथों, ऐतिहासिक शिलालेखों, साहित्यिक स्रोतों तथा प्रचलित लोककथाओं के आधार पर, उस ग्रंथ में पंवार (परमार) वंश की गौरवशाली परंपरा और समाज में उसकी भूमिका को खोजने तथा प्रस्तुत करने का विनम्र प्रयास किया गया था।

इतिहास केवल अतीत की घटनाओं का संकलन मात्र नहीं होता, अपितु यह समाज की आत्मा और उसकी पहचान का दर्पण भी होता है। यदि किसी समाज का इतिहास लुप्त हो जाए तो उसकी परंपराएँ, संस्कृति और गौरव-बोध धीरे-धीरे क्षीण होने लगते हैं। इसी विचार से प्रेरित होकर, इस द्वितीय कृति में पोवार समुदाय के इतिहास, संस्कृति, परंपरा एवं मूल्यों को और अधिक गहराई से समझने और प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है।

इस पुस्तक में, पोवार क्षत्रियों की उत्पत्ति, प्राचीन मालवा क्षेत्र से उनका संबंध, विभिन्न युगों में उनकी सामाजिक भूमिका, तथा मध्य भारत में उनका पुनर्वास—इन सभी पहलुओं पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। साथ ही, उन उदाहरणों और संदर्भों का भी समावेश किया गया है, जो इस समुदाय की प्राचीनता और गौरव को प्रमाणित करते हैं।

लेखन का उद्देश्य केवल इतिहास का संकलन करना नहीं, बल्कि भावी पीढ़ियों के समक्ष यह स्पष्ट करना भी है कि पोवार समुदाय की जड़ें कितनी गहरी और समृद्ध हैं। यदि आज की पीढ़ी अपने अतीत को समझेगी, तभी वह वर्तमान में आत्मविश्वास से पूर्ण कार्य कर पाएगी और भविष्य का अपना मार्ग प्रशस्त कर सकेगी।

पूर्ववर्ती पोवार नामक पुस्तक में प्राचीन ग्रंथों और वैदिक साहित्य के गहन अध्ययन के दौरान पंवार इतिहास की खोज हमें प्रवर, पुरूराय तथा ऋग्वेदीय पौर तक ले गई थी। इस खोज में एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह उभरता है कि जहाँ प्रवर शब्द संस्कृत साहित्य (रामायण, महाभारत एवं पुराणों) में स्पष्ट रूप से उपलब्ध है, वहीं वेदों—विशेषतः ऋग्वेद—में इसका उल्लेख क्यों नहीं मिलता। इसी प्रकार गोत्र जैसा शब्द भी ऋग्वेद में अनुपस्थित है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रवर व गोत्र यह दोनों शब्द उत्तरवैदिक और महाकाव्य-पुराणकालीन समाज के विकास की उपज हैं, न कि प्राचीनतम वैदिक युग की।

संस्कृत साहित्य में सप्तर्षियों को प्रवर ऋषि कहा गया है, किन्तु प्राकृत एवं जनभाषा में इसका रूपांतर पवर अथवा पउर के रूप में मिलता है। उच्चारण के दृष्टिकोण से पउर शब्द पौर का आभास कराता है। यही कारण है कि जहाँ बाद के साहित्य में प्रवर मिलता है, वहाँ ऋग्वेद में पौर शब्द प्रयुक्त हुआ है।

ऋग्वेद मंडल ५, सूक्त ७४, मंत्र ४ में ऋषि को पौर कहा गया है। संस्कृत मूल श्लोक इस प्रकार है -

ऋग्वेद ५.७४.४
पौरं चिद्धयुदप्रुतं पौर पौराय जिन्वथ:.
यदीं गृभीततातये सिंहमिव द्रुहस्पदे.. (४)

अर्थात -
हे पौर द्वारा स्तुत अश्विनीकुमारो! तुम जल बरसाने वाले बादल को पौर ऋषि के पास भेजो. शूर जिस प्रकार गरजते हुए सिंह को मार गिराता है, उसीप्रकार यज्ञकार्य में व्यस्त पौरो के निकट तुम बादल को बरसाओ, (४)

इसी प्रकार, ऋग्वेद मंडल ५, सूक्त ७३ तथा ७४ में जिन ऋषियों का उल्लेख है, उन्हें पौर आत्रेय कहा गया है। यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि ये पौर ऋषि उन अत्रि ऋषि के वंशज है जो सप्तर्षियों में गिने जाते हैं।

यहाँ से यह भाषाशास्त्रीय और ऐतिहासिक निष्कर्ष निकलता है कि वैदिक साहित्य में पौर शब्द प्रचलित था, जो प्राकृत में पउर/पवर के रूप में विकसित हुआ और बाद में संस्कृत साहित्य में प्रवर के रूप में प्रतिष्ठित हुआ।

भाषाशास्त्रीय दृष्टि से यह यात्रा इस प्रकार समझी जा सकती है -

पौर → पउर → पवर → प्रवर
यह रूपांतरण न केवल ध्वन्यात्मक परिवर्तन का उदाहरण है, बल्कि यह सांस्कृतिक निरंतरता और परंपरा की गतिशीलता को भी दर्शाता है।

ऐतिहासिक दृष्टि से, सप्तर्षियों को पौर कहना इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि उस समय यह शब्द "श्रेष्ठ" अथवा "उत्कृष्ट" ऋषि के अर्थ में प्रयोग किया जाता था। उत्तरवैदिक काल में जब वंशावली और गोत्र की औपचारिक संकल्पना विकसित हुई, तब यही शब्द प्रवर के रूप में स्थिर हो गया और कुल-परंपरा से जोड़ दिया गया।

अतः, पंवार वंश के संदर्भ में पौर एवं प्रवर की यह अवधारणा केवल नाम-समानता का विषय नहीं है, बल्कि यह गहरी वैदिक जड़ें रखने वाला ऐतिहासिक प्रमाण है। इससे यह समझ आता है कि पंवार समुदाय का प्राचीन वैदिक परंपरा से संबंध एक भाषिक और सांस्कृतिक निरंतरता के माध्यम से जुड़ा हुआ है।

ऋग्वेद के अध्ययन से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि प्राचीन आर्यों की सामाजिक संरचना पाँच प्रमुख जातियों अथवा शाखाओं पर आधारित थी। इनका उल्लेख यदु, तुर्वश, अनु, द्रुह्यु और पुरु के रूप में मिलता है। इनमें से पुरु जाति को विशेष महत्व प्राप्त था और उनका निवास क्षेत्र सप्तसिंधु प्रदेश और सरस्वती नदी का तटवर्ती इलाका माना गया है।

प्राचीन ग्रंथों के प्रमाणों से यह ज्ञात होता है कि सप्तसिंधु क्षेत्र उस काल में अत्यंत समृद्ध और उन्नत सभ्यता का केंद्र था। सरस्वती नदी के किनारे बसे हुए पुरु न केवल क्षेत्रफल की दृष्टि से विस्तृत राज्य के स्वामी थे, बल्कि सांस्कृतिक और राजनीतिक प्रभाव में भी प्रमुख स्थान रखते थे।

ऋग्वेद में पुरुओं के लिए "पौर" शब्द का प्रयोग हुआ है। विद्वानों के अनुसार, पुरु शाखा को "ब्रह्मक्षत्र" की संज्ञा दी गई, जिसका आशय यह है कि उनमें ब्राह्मणत्व और क्षत्रियत्व—दोनों के गुणों का अद्वितीय संगम विद्यमान था। इस प्रकार, वे न केवल आध्यात्मिक और वैदिक परंपराओं के संरक्षक थे, बल्कि शौर्य और राज्यसत्ता के भी धनी थे।

यह प्रश्न स्वाभाविक है कि ऋग्वैदिक कालीन पुरु (पौर) शाखा का संबंध वर्तमान में ज्ञात पोवार (पंवार/परमार) क्षत्रियों से किस प्रकार है। इस संबंध में वंशावली और भाषिक साक्ष्य उल्लेखनीय प्रकाश डालते हैं।

पोवारों की वंशावली में सप्तर्षियों को पूर्वज माना गया है। प्राचीन ग्रंथो में में पंवार राजाओं को "ब्रह्मक्षत्र" की संज्ञा दी गई है, अर्थात् वे ब्राह्मणत्व एवं क्षत्रियत्व—दोनों गुणों से संपन्न माने गए।

भाषाशास्त्रीय दृष्टि से देखा जाए तो "पोवार" शब्द का उद्गम मूलतः ऋग्वैदिक "पौर" से प्रतीत होता है। ध्वनि-परिवर्तन और अपभ्रंश की स्वाभाविक प्रक्रिया के अनुसार "पौर" शब्द का क्रमिक रूपांतरण पौर → पोआर → पोवार के रूप में हुआ, जो निकटतम ध्वन्यात्मक विकास है।

इसी मूल संस्कृत शब्द पौर से विभिन्न अपभ्रंश और स्थानीय रूप बने, जैसे—पोआर, पोवार, पउर, पवर, प्रवर (संस्कृत अपभ्रंश), प्रवार, पावार, पोरस, पोरुआराय, पंवार, पुवार आदि। ये रूप इस बात के भाषिक प्रमाण हैं कि वर्तमान पोवार/पंवार समुदाय की जड़ें प्राचीन पौर शाखा से जुड़ी हुई हैं।

ऋग्वैदिक साक्ष्यों में यह उल्लेख मिलता है कि इंद्र को भी “पौर” कहा गया है। इसका कारण यह है कि पुरु जाति के राजा स्वयं इंद्र पद पर विभूषित माने जाते थे। इस प्रकार “पौर” शब्द न केवल जातिगत पहचान था, बल्कि एक विशिष्ट वैदिक उपाधि और साम्राज्य का प्रतीक भी था।

पुरु या पौर समुदाय के अधीन जो भूभाग था, उसे “पौर राष्ट्र” कहा जाता था। ऐतिहासिक दृष्टि से यह राष्ट्र अत्यंत व्यापक था, जिसका शासन क्षेत्र आज के ईरान तक फैला हुआ था ! ईरान का प्राचीन नाम “पर्शिया” माना जाता है, जो संस्कृत के “पौरसिक” अथवा “पारसिक” शब्द से सम्बद्ध प्रतीत होता है। “पौरसिक” से “पारसिक” और आगे चलकर “पर्शिया” का रूप बनना एक स्वाभाविक भाषिक विकास है।

इस ऐतिहासिक कड़ी को आज भी विभिन्न स्थानों के नामों और समुदायों में देखा जा सकता है। ईरान में आज भी “पौर” नामक एक कस्बा विद्यमान है। भारत में गुजरात का प्रसिद्ध बंदरगाह पोरबंदर उसी परंपरा की स्मृति माना जा सकता है। पाकिस्तान में आज भी पोवार समुदाय के लोग पाए जाते हैं, जो इस बात का द्योतक है कि वह भूमि कभी पौरों के अधीन रही होगी।

इसी प्रकार अफगानिस्तान में भी पौरा कुल से संबंधित लोग मिलते हैं, जिन्होंने कालांतर में इस्लाम धर्म ग्रहण कर लिया। किंतु वे आज भी स्वयं को अपने प्राचीन वंश–पंवार (परमार) राजवंश–से संबद्ध मानते हैं। यह तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि इन अफगानी पंवार वंशियों

की वंशावली में “पौरा कुल” का नाम सुरक्षित है, जो उनके प्राचीन पुरु-पौर मूल की पुष्टि करता है।

यूनानी इतिहासकारों के विवरण में उल्लेख मिलता है कि सिकंदर (अलेक्ज़ांडर) के भारत आक्रमण के समय जिन दो प्रमुख राजाओं ने उसका सामना किया, उनमें दोनों को “पोरस (Porus)” कहा गया है । प्रसिद्ध यूनानी इतिहासकार टोलेमी ने उन्हें Poruarai कहा है। स्पष्ट है कि यह पोरस वास्तव में पौरों (पुरुओं) के राजा थे। अनेक पश्चिमी इतिहासकार भी इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि पोरस, प्राचीन पोवार क्षत्रिय वंश से सम्बद्ध थे।

पौर वंशज केवल वैदिक काल तक ही सीमित नहीं रहे, बल्कि बाद की शासन व्यवस्थाओं में भी उनका प्रभाव महत्वपूर्ण रूप से बना रहा। समय के साथ नए राजवंश उभरते गए, किंतु प्रत्येक शासक पौरों को विशेष महत्व देता रहा, क्योंकि यह वही भूमि थी जिसे ऐतिहासिक रूप से “पौरराष्ट्र ” कहा जाता था।

आर्य चाणक्य (कौटिल्य) के समय तक पौरों की यह परंपरा संस्थागत रूप में भी विद्यमान थी। उनके ग्रंथों में “पौरसभा” का उल्लेख मिलता है। यह सभा राजा के अधिकार क्षेत्र में होते हुए भी नागरिक सहभागिता का एक महत्त्वपूर्ण अंग थी। कालांतर में यह संगठन क्रमशः एक चयनित नागरिक सभा का रूप ले बैठा, जिसमें शहर के गणमान्य व्यक्तियों, विद्वानों, विभिन्न वर्गों के बुज़ुर्गों और प्रभावशाली व्यक्तियों की भागीदारी होती थी।

धीरे-धीरे यह पौरसभा विकसित होकर नगरों में गणमान्य नागरिकों की परिषद् बन गई। इसी परंपरा का विकसित रूप आज भी हमारे नगर प्रशासन में दिखाई देता है, जहाँ नगरों और महानगरों में "महापौर" (Mayor) का पद विद्यमान है। यह आधुनिक प्रशासनिक पद वास्तव में प्राचीन पौरसभा की ऐतिहासिक और सांस्कृतिक स्मृति का जीवंत अवशेष है।

पौरो के उत्कर्ष और वैभव से युक्त नगरों को पौर कहा जाता था, तथा उनकी सभाओं को पौर सभा नाम मिला। इन पौरो में राजवंश भी थे, ऋषि भी, और साथ ही अदम्य क्षत्रिय योद्धा भी।

इंद्र का एक उपनाम पुरंदर विद्वानों के मत में संभवतः "पौर + इंद्र" के संयोग से बना प्रतीत होता है। इससे यह संकेत मिलता है कि पौर जाति अत्यंत प्राचीन और उन्नत थी। उनके नगरों को ही पुर कहा जाने लगा, और इसी परंपरा से आगे चलकर अन्य नगरों को भी पुर उपसर्ग के साथ पुकारा जाने लगा। यही कारण है कि महाभारत और रामायण जैसे ग्रंथों में पौरो का उल्लेख "पौर सभाओं" अथवा नगरवासियों के रूप में मिलता है। वस्तुतः प्राचीन ऋग्वैदिक पौर शब्द कालांतर में नगरों और उनके प्रमुखों के लिए प्रयोग में आने लगा।

जैसे विक्रमादित्य की उपाधि समय-समय पर अनेक राजाओं ने धारण की, उसी प्रकार पौर नाम भी बाद के युगों में शासन के प्रतिष्ठित व्यक्तियों और नगरप्रमुखों के लिए प्रयुक्त होने लगा।

प्राचीन पौरो की श्रेष्ठता को व्यक्त करने हेतु प्रवर शब्द प्रचलन में आया। यह संस्कृत शब्द मूल पौर का ही एक भाषिक रूपांतरण या अपभ्रंश माना जा सकता है। इसी कारण ग्रंथों में देवताओं, राजाओं, योद्धाओं और ऋषियों को प्रवर—अर्थात श्रेष्ठ पुरुष—कहा गया है। श्रीराम, महर्षि वसिष्ठ, भीष्म पितामह जैसे महापुरुषों को प्रवर विशेषण से विभूषित किया गया है, क्योंकि वे प्राचीन रूप से पुरु जाति अथवा पौर थे।

प्राचीन ग्रंथों के अध्येता पंडित आचार्य श्रीराम शर्मा ने अपनी कृति ऋग्वेद संहिता (भाग २, मंडल ३, ४, ५, ६) में उल्लेख किया है कि सिकंदर से युद्ध करने वाला राजा पोरस वस्तुतः पौर वंश का शासक था—वही पौर जिनका वर्णन ऋग्वेद में मिलता है।

यूनानी इतिहासकारों ने भी इसका प्रमाण दिया है। प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता टोलेमी ने पोरस को “पोरुआराई (Poruarai)” कहा है, जिसका शाब्दिक संबंध सीधे-सीधे पुरुराय या पौरराय शब्द से जुड़ता है। यह तथ्य इस मत को और बल देता है कि पोरस प्राचीन पौर वंश का प्रतिनिधि था।

पश्चिमी इतिहासकारों के अनुसार भी पोरस पोवार क्षत्रिय था। इस प्रकार जब पूर्व और पश्चिम के प्रमाणों को एक साथ देखा जाता है, तो स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है कि वर्तमान पोवार जाति प्राचीन पुरु अथवा पौर वंश की ही अविरल धारा है।
मालवा के गौरवशाली नगर धार और देवास के राजकवि कनिराम ने भी अपने काव्य में पुरुराय को पंवार वंशी कहकर इसी परंपरा की पुष्टि की है।

वस्तुतः पौरस (Porus / Poros) नाम में ही पौर शब्द की झलक स्पष्ट रूप से मिलती है, जो इस वंश की प्राचीनता और गौरवपूर्ण इतिहास को प्रत्यक्ष करता है।

अनगिनत देशी और विदेशी, प्राचीन एवं मध्यकालीन ग्रंथों में स्पष्ट प्रमाण मिलता है कि आज का सिंध और कच्छ का उत्तरी भाग, मारवाड़ वर्तमान पाकिस्थान के अंतर्गत पंजाब —अर्थात् प्राचीन सरस्वती प्रदेश—वास्तव में पौर राष्ट्र का केंद्र था। यही वह भूमि थी, जहाँ से पौर अर्थात् आज के पोवार लोगों का प्राचीन इतिहास आरंभ होता है।

ऐतिहासिक और सांस्कृतिक साक्ष्यों के अनुसार लगभग २४०० वर्ष पूर्व यह वीर और प्राचीन क्षत्रिय जाति सरस्वती प्रदेश से प्रस्थान कर राजपुताना तथा गुजरात में आ बसी। यहाँ इन्होंने अपने साहस, संगठन और शौर्य से नगरों और किलों की स्थापना की तथा स्थानीय समाज में अपने प्रभाव का विस्तार किया।

कालांतर में, जब राजनीतिक परिस्थितियाँ बदलीं, तो १७वीं शताब्दी में पोवार वंशज मध्यभारत तक पहुंचे। यहाँ भी इन्होंने अपनी वीरता और संगठन शक्ति के बल पर स्थायी ठिकाने बनाए।

इस दीर्घ यात्रा की गवाही अनेक ग्रंथ और परंपराएँ देती हैं। ऋग्वेद से लेकर यूनानी इतिहासकारों के लेखों, राजस्थानी-ब्रजभाषा कवियों की रचनाओं से लेकर मालवा और धार के परमार शिलालेखों तक—हर स्रोत

यह प्रमाणित करता है कि आज के पोवार वास्तव में प्राचीन पौर (पुरु) वंश की गौरवशाली संतान हैं।

वस्तुतः पोवारों का इतिहास केवल किसी जाति की गाथा नहीं, बल्कि भारत की प्राचीन सभ्यता, सरस्वती संस्कृति और क्षत्रिय परंपरा का जीवंत प्रमाण है।

भारतीय ग्रंथों और पुराण-कथाओं में बार-बार राजा पुरु तथा उनके वंशज पौरवों का उल्लेख मिलता है। यह पौरव संभवतः वे शाखाएँ थीं, जो मुख्य पुरु जाति के समूह से निकलकर भारत के पूर्वी भू-भाग की ओर प्रवास कर गईं।

मुख्य पुरु अथवा पौर समूह का मूल आधारक्षेत्र प्राचीन सरस्वती प्रदेश था, जहाँ यह समुदाय लगभग २५०० वर्ष पूर्व तक संगठित रूप से निवास करता था। बाद के काल में यही जाति भारत के विभिन्न अंचलों में प्रविष्ट हुई।

यह ध्यान देने योग्य है कि पुरु मात्र किसी एक राजा की संतान का नाम नहीं था, बल्कि एक संपूर्ण जाति-समूह का द्योतक था। ऋग्वेद में पुरु शब्द का अनेकवचन में प्रयोग हुआ है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि यह एक जाति भी थी। साथ ही कहीं-कहीं पुरु नामक राजा का भी उल्लेख मिलता है। इसका अर्थ है कि पुरु शब्द जाति और व्यक्ति—दोनों अर्थों में प्रयुक्त हुआ।

इतिहास के अध्ययन से यह भी ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में किसी व्यक्ति की पहचान प्रायः उसकी जाति या समुदाय से ही होती थी। इसीलिए अनेक पुरु-वंशीय राजाओं के नाम पुरु, पौर, पौरस, पौरराय आदि रूपों में मिलते हैं।

यही परंपरा आगे चलकर पोवार समुदाय में भी जीवित रही। मध्यभारत में लगभग १९५० तक ३६ कुलों वाले पोवारों का उल्लेख प्रायः उनके जाति-नाम “पोवार” से ही किया जाता था, जबकि उनके अलग-अलग कुलनाम केवल विवाह-संबंधों के निर्धारण हेतु प्रयोग में लाए जाते थे।

महाभारत के जयद्रथ पर्व में ऐसा वर्णन मिलता है जिसमे सिन्धु प्रदेश के योद्धाओं को सैन्धव कहा गया है, जबकि पुरु अथवा पौर देश के वीरों को पौरवा के नाम से संबोधित किया गया है।

इससे यह तथ्य स्पष्ट होता है कि ग्रंथ में पौर शब्द का ही रूपांतर पौरव या पौरवा: रूप में प्रयोग हुआ है। अर्थात्, पौर राष्ट्र के योद्धा और राजा ही आगे चलकर पौरव कहे गए ।

पोवारों के प्राचीन अस्तित्व का उल्लेख सिंध, गुजरात, अफगानिस्तान, मारवाड़ और मालवा के इतिहास में प्राप्त होता है। पिछली पीढ़ी तक के पोवार बुज़ुर्ग यह स्मरण दिलाते रहे हैं कि उनके पूर्वज धारानगर से यहाँ आकर बसे थे। हालाकी धारानगर के पहले का इतिहास उनको ज्ञात न था !

पोवारों की उपलब्ध वंशावली-पोथियों में भी उनके मूल निवास-क्षेत्रों का उल्लेख मिलता है, जिनमें सिंध, राजपुताना, गुजरात, मारवाड़ और मालवा विशेष रूप से वर्णित हैं। भाषाविद भी इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि पोवारों की बोली पश्चिमी राजपुताना की बोलियों से अधिक साम्यता रखती है।

आधुनिक डीएनए विश्लेषण में भी यह तथ्य सामने आया है कि पोवारों की आनुवंशिक संरचना उपर्युक्त क्षेत्रों के लोगों से गहराई से जुड़ी हुई है।

इन सभी ऐतिहासिक, भाषाई और वैज्ञानिक प्रमाणों को देखते हुए यह निष्कर्ष स्पष्ट रूप से सामने आता है कि पोवार वास्तव में प्राचीन पौर राष्ट्र के क्षत्रिय जन हैं !

पोवारों को परमार भी कहा गया है ! परमार अन्य परिहार , चौहान , चालुक्य (सोलंकी) इन तीन वीरो के साथ यज्ञ की अग्नि से प्रगट होने की कहानी भी प्रसिध्द है ! परन्तु अग्नि से प्रकट होने की जो कथा प्रचलित है, वह ज्यादा प्राचीन नहीं है। यह कथा मुख्यतः १०वीं-११ वीं शताब्दी के दौरान लिखित कुछ ग्रंथो में व् लोकोक्तियों में थी और बाद में व्यापक रूप से प्रचलित हुई । इसका आधार रामायण महाकाव्य में उल्लेखित वह प्रसिद्ध प्राचीन घटना है, जिसमें ऋषि वशिष्ठ की दिव्य गौ नंदिनी अपने चमत्कारिक सामर्थ्य से शत्रु-विनाशक वीरों का प्राकट्य करती है। रामायण में इन वीरों में पह्लव योद्धाओं का उल्लेख मिलता है।

ऋषि वशिष्ठ ने तत्कालीन विदेशी योद्धाओं—पह्लव, यवन आदि की सहायता ली थी , और उस प्राचीन घटना का वाल्मीकि ऋषि ने अलंकारिक रूप में उनके महाकाव्य रामायण में अंकित किया। ये पह्लव वस्तुतः पारस (ईरान) के निवासी योद्धा थे। विदित है कि वैदिक काल में पुरु जाति का एक भाग पश्चिम की ओर जाकर पारसिक प्रदेश में बस गया था, जिन्हें रामायण काल तक पह्लव कहा जाता था । इस दृष्टि से पह्लव भी मूलतः पुरु जाति की शाखा ही थे। इसी कारण कुछ इतिहासकार परमार अथवा पंवारों की उत्पत्ति को पर्शियन अथवा पारसिक मूल से जोड़ने का प्रयास करते हैं।

किन्तु ऐतिहासिक साक्ष्य इस बात की पुष्टि करते हैं कि पोवार मूलतः सिन्धु-सरस्वती सभ्यता और मारवाड़ क्षेत्र के पौर राज्य के क्षत्रिय थे। वैदिक युग में उनका प्रभाव उत्तर भारत से लेकर पारसिक प्रदेश तक विस्तृत था। इस प्रकार पोवारों का वास्तविक मूल पौर क्षत्रिय वंश में निहित है, न कि केवल बाद की अग्निकुल कथा में।

ऋग्वेद, पुराण तथा अन्य वैदिक और उत्तरवैदिक ग्रंथों के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि उस युग में आर्य एवं अनार्य समुदायों के मध्य निरन्तर संघर्ष होते रहे। इन संघर्षों का स्वरूप केवल भिन्न जातियों तक सीमित नहीं था, बल्कि आर्य समुदाय के भीतर भी आपसी युद्धों के अनेक साक्ष्य मिलते हैं।

भारत में सर्वप्रथम सूर्यवंशी आर्यों का प्रवेश हुआ, जिन्होंने विभिन्न प्रदेशों में अपने राज्य स्थापित किए। उनके उपरान्त चंद्रवंशी आर्यों का आगमन

हुआ। वैदिक साहित्य एवं पुराणों में सूर्यवंशी और चंद्रवंशी शासकों के मध्य भी हुए संघर्षों और युद्धों का विस्तार से उल्लेख प्राप्त होता है। इन वर्णनों से यह प्रतीत होता है कि उस काल की राजनीतिक व्यवस्था मुख्यतः वंशगत प्रतिद्वंद्विता और सामरिक विस्तार की भावना से प्रभावित थी।

ऋग्वेद में वर्णित आर्यों की पाँच प्रमुख जातियों में पुरु जाति का विशेष उल्लेख मिलता है। कुछ इतिहासकारों का मत है कि वैदिक काल से भी पूर्व आर्यों के समूह पश्चिम एशिया से आकर इस क्षेत्र में बड़ी संख्या में बसे और यहीं से उनके विभिन्न वंशों का विस्तार हुआ।

वायु पुराण एवं अन्य पौराणिक ग्रंथों में उल्लेख है कि पुरु जाति से ब्राह्मण और क्षत्रिय - दोनों वर्गों की उत्पत्ति हुई। इसी कारण पौरवों को “ब्रह्मक्षत्र” की संज्ञा दी गई है। वायु पुराण में पौरव राजा देवापि को इक्ष्वाकु वंश का वंशज बताया गया है, जिससे यह संकेत मिलता है कि प्राचीन वैदिक पुरु आर्य समूह से आगे चलकर ब्राह्मणों के साथ-साथ सूर्यवंशी और चंद्रवंशी क्षत्रिय वंशों की परंपरा विकसित हुई। इन्हीं क्षत्रियों को आगे चलकर अग्निवंशी भी कहा गया।

कालांतर में यही प्राचीन पुरु अथवा पौर वंश विभिन्न नामों से प्रसिद्ध हुआ, जिनमें पावार, पोवार, पंवार और प्रवार जैसे रूप मिलते हैं।

पुरु जाति का एक उपसमूह, जिसे पह्लव कहा गया, ने वशिष्ठ और विश्वामित्र के मध्य हुए प्रसिद्ध संघर्ष में भाग लिया था। कालांतर में

इतिहासकारों और ग्रंथकारों ने इस वीर समूह को "परमार" की संज्ञा दी। परमार अपना गोत्र वशिष्ठ लिखते है ! परमार या पह्लव मूलतः पौर या पुरु जाति के ही थे ! परमार पोवार थे और इसकारण सरस्वती प्रदेश के पोवारो को भी परमार कहा गया है ! क्योंकि ये एकदूसरे को पूरक है ! परमार संज्ञा प्राप्त राजवंश बहुत प्रसिध्द हुआ ! इसकारण परमार संस्कृत काव्यो में लिखा गया !

ऋग्वेद में यह उल्लेख मिलता है कि ऋषि वशिष्ठ अपने अनुयायियों सहित सिन्धु नदी पार करके भारत के भीतर प्रविष्ट हुए। वशिष्ठ और उनके वंशजों का वर्ण गौरवर्णीय बताया गया है, तथा ऋग्वेद में यह उल्लेखित है कि वे सिन्धु नदी के पार से आए थे। यद्यपि वशिष्ठ सप्तर्षियों में से एक माने जाते हैं, तथापि वे वैदिक पुरु जाति से ही संबंधित थे।

श्वित्यञ्चो मा दक्षिणतस्कपर्दा धियंजिन्वासो अभि हि प्रमन्दुः उत्तिष्ठन्वोचे परि बहिषो नॄन मे दूरादवितवे वसिष्ठाः.. (ऋग्वेद ७-३३-१)

गोरे रंग वाले, यज्ञकर्म पूर्ण करने वाले एवं शिर के दक्षिण भाग में चोटी रखने वाले वसिष्ठपुत्र मुझे प्रसन्न करते हैं. मैं यज्ञ से उठता हुआ उनसे कहता हूँ कि हे वसिष्ठपुत्रो! मुझसे दूर मत जाओ. (१)

एवेन्नु कं सिन्धुमेभिस्ततारेवेन्नु कं भेदमेभिर्जघान.
एवेन्नु कं दाशराज्ञे सुदासं प्रावदिन्द्रो ब्रह्मणा वो वसिष्ठाः.. (ऋग्वेद ७-३३-३)

इसी प्रकार वसिष्ठपुत्रों ने सुखपूर्वक सिंधु नदी को पार किया था. इसी प्रकार इन्होंने भेद नामक शत्रु को मारा. हे वसिष्ठपुत्रो! इसी प्रकार दाशराज्ञ युद्ध में तुम्हारे मंत्रों की शक्ति से इंद्र ने सुदास राजा की रक्षा की थी !

ऋषि वशिष्ठ की उत्पत्ति के संबंध में प्राचीन ग्रंथों में यह उल्लेख मिलता है कि वे मित्र और वरुण से उत्पन्न हुए थे। विद्वानों का मत है कि यह विवरण वास्तविक न होकर आलंकारिक अभिव्यक्ति है, जिसके माध्यम से वशिष्ठ की ब्रह्म-क्षत्र परंपरा का संकेत किया गया है।

"वशिष्ठ" शब्द का अर्थ "श्रेष्ठ" अथवा "उत्कृष्ट" होता है। इसी कारण उन्हें प्राचीन साहित्य में प्रवर भी संबोधित किया गया है। यह उपाधि उनके आध्यात्मिक और सामाजिक दोनों ही रूपों में सर्वोच्च स्थान को दर्शाती है। रामायण महाकाव्य में कहा गया है -

इक्ष्वाकुणां ही सर्वेषां वशिष्ठ: प्रवरो गुरुः ।
तस्मादनन्तरं सर्वे भवन्तो गुरवो मम ॥ ११॥

काफी पंवार वंशीय लोग - चाहे वे मराठा पवार कहलाएँ, या उत्तर व मध्य भारत में निवास करने वाले पंवार या पोवार हों - स्वयं को सूर्यवंशी मानते हैं। इनका प्रमुख गोत्र वशिष्ठ या फिर काश्यप बताया जाता है। जिन पंवारों को अपना सटीक गोत्र ज्ञात नहीं रहता, वे सामान्यतः काश्यप गोत्र धारण कर लेते हैं, क्योंकि प्राचीन ग्रंथों में देवता , ब्राह्मण , क्षत्रिय लोगो के मूल पूर्वज ऋषि काश्यप को माना गया है।

मालवा और राजपूताना क्षेत्र में पंवारों को अग्निवंशी भी कहा। “अग्निवंशी” होना केवल प्रतीकात्मक उत्पत्ति नहीं, बल्कि संभवतः उनकी अग्निपूजा परंपरा से भी जुड़ा हुआ है । मध्य भारत में ३६ कुल पोवारों में और राजपूताना के राजघरानों में आज भी शुद्ध रूप से बनाया गया नैवेद्य अग्नि को अर्पित करने की प्रथा जीवित है। यह परंपरा उनके अग्निपूजक क्षत्रिय होने को प्रमाणित करती है।

इतिहास अपने आप में एक जटिल धारा है। विभिन्न ग्रंथ अलग-अलग कालों में लिखे गए और उनमें से अनेक अलंकारिक काव्य-रूप में रचे गए हैं। इन्हीं से उस समय की सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियों और ऐतिहासिक संकेतों की झलक मिलती है, परंतु उन्हें समझने के लिए आवश्यक है कि समयानुसार उनका संशोधन व पुनर्व्याख्या की जाए।

मानव समाज का विकास सदैव स्थलांतरण, आक्रमण, युद्ध और निरंतर परिवर्तनों के बीच हुआ है। यही कारण है कि हर दौर में एक नया सांस्कृतिक मिश्रण सामने आया। फिर भी, इन निरंतर परिवर्तनों और आपसी मेलजोल के बीच कई समुदाय अपने नए रूपों में भी अपने प्राचीन इतिहास की छाप आज तक संजोए हुए हैं।

उदाहरणस्वरूप, प्राचीन आर्य जातियों में वर्णित -

यदु जाति, जिनके वंशज आज यादव कहलाते हैं।

पुरु जाति, जिन्हें प्राचीन ग्रंथों में "पौर" कहा गया और आगे चलकर यही पोवार या पंवार जाति के रूप में आज भी विद्यमान दिखाई देती है।

इस प्रकार, समय की धारा में परिवर्तन के बावजूद इन समुदायों ने अपने इतिहास की निरंतरता को जीवित रखा है।

पोवार या परमार राजाओं को "ब्रह्मक्षत्र" क्यों कहा गया होगा?
इतिहासकारों के अनुसार इसका कारण यह था कि वे मूलतः ब्राह्मण थे , परंतु समय के साथ धर्म एवं राष्ट्र रक्षा के लिए उन्होंने क्षत्रियत्व स्वीकार कर लिया।

शतपथ ब्राह्मण (अध्याय ३, ब्राह्मण ५, श्लोक ३२) में स्पष्ट उल्लेख है कि -
"अग्नि ब्रह्म है।"
अर्थात अग्नि को ब्रह्म का स्वरूप माना गया। चूँकि अग्नि से उत्पन्न माने गए वंशजों को ही अग्निवंशी कहा गया, इसलिए पौर (पोवार/परमार) राजाओं को भी कभी ब्रह्मक्षत्र और कभी अग्निवंशी कहा गया।

पौर लोग प्राचीन काल से ही भारत के सीमांत क्षेत्रों में निवास करते थे। इन इलाकों पर प्रायः पश्चिम से आने वाले असभ्य और क्रूर आततायी आक्रमण करते रहते थे। इस परिस्थिति ने पौरो को केवल शास्त्र (धार्मिक ज्ञान) धारण करके शांतिपूर्वक रहने नहीं दिया; उनके लिए शस्त्र उठाना भी अनिवार्य हो गया।
इसीलिए पौर (पोवार/परमार) समुदाय ने शास्त्र और शस्त्र दोनों में पारंगत होकर स्वयं को शासक और रक्षक के रूप में स्थापित किया।

इतिहासकार श्री रामकरण आसोपा का मत है कि परमार या पंवार मूलतः अग्निपूजक वशिष्ठ ब्राह्मण थे, जिन्होंने कालांतर में क्षत्रियत्व स्वीकार किया।
इसी प्रकार इतिहासकार लासेन का भी मानना है कि यूनानी विद्वान टोलेमी द्वारा उल्लिखित "पोरुआराय" जाति वास्तव में परमार या पंवार ही हैं। यूनानी लेखनों में जिस "पौर राय" का उल्लेख मिलता है, उसका अर्थ ही "पौर राजा" होता है।

ऋग्वेद में भी सप्तर्षियों को "पौर" कहा गया है और कहीं उन्हें "प्रवर" भी संबोधित किया गया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि "पौर" और "प्रवर" एक ही मूल शब्द के भिन्न रूप हैं, जो समय और संदर्भ के अनुसार प्रयुक्त हुए।

३६ कुल पोवार समुदाय के बुजुर्ग स्वयं को धारानगर के पोवार कहा करते थे। वे धारानगर के प्रसिद्ध राजा भोज को भी पोवार कहते थे।

ब्रिटिश इतिहासकारों ने ३६ कुल पोवारों पर लिखे अपने विवरण में उल्लेख किया है कि पोवार वास्तव में मालवा और पश्चिमी राजपूताना से आए हुए प्रमार (परमार) क्षत्रिय हैं।

रतलाम के भटजी द्वारा लिखित पोवारों की पोथियों से यह प्रमाण मिलता है कि पोवारो का मूल क्षेत्र राजपुताना, गुजरात, मालवा, उत्तर-पश्चिम भारत और सिंध रहा है।

"पोवार कौन?", इसका उत्तर हमें लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व के इतिहास में, विशेषकर उत्तर-पश्चिम भारत के इतिहास की खोज में मिलता है। यही नहीं, पोवारों का उल्लेख पश्चिम के देशों तथा अरब जगत के इतिहास में भी मिलता है।

इतिहास में राजा भोजदेव और सम्राट विक्रमादित्य को पोवार या पौर कहा गया है और उन्हें आदित्य पोवार वंश से संबंधित माना गया है।

इतिहास में पोवार जिन्हें परमार अथवा प्रमार भी कहा जाता है, एक स्वतंत्र क्षत्रिय जाति के रूप में वर्णित हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हमें शिलालेखों में प्राप्त होता है।

गिरवड़ नामक स्थान से प्राप्त सन १२८७ का एक परमारकालीन शिलालेख, जो परमार राजा प्रतापसिंह पटला के शासनकाल से संबंधित है, अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस शिलालेख की पाँचवीं पंक्ति में स्पष्ट रूप से उल्लेख मिलता है कि "परमार एक जाति है"।

यह प्रमाण इस तथ्य को पुष्ट करता है कि परमार/प्रमार एक सुदृढ़ जाति थी, जिसकी पहचान मध्यकालीन भारत में स्पष्ट रूप से बनी हुई थी।

मध्यकालीन रासो साहित्य तथा मध्य भारतीय काव्य परंपरा में क्षत्रियों के ३६ राजवंशों का उल्लेख मिलता है।

उत्तर पाकिस्तान क्षेत्र में काठी, हुण और बघेला कहलाने वाले लोग स्वयं को पंवार मानते हैं। इसी प्रकार मध्य भारत में भी कटरा (भाटों के अनुसार काठी), हुणवत, बिसेन, गौतम, बघेला, परिहार, चौहान आदि ३६ कुल पंवार अथवा पोवार कुल है।

यह तथ्य स्पष्ट करता है कि पंवार केवल कोई परिवार या उपकुल नहीं, बल्कि एक प्राचीन क्षत्रिय जाति है । 'परमार' वास्तव में इनकी उपाधि रही है, जो उनके राजनीतिक और सामाजिक गौरव का प्रतीक है।

यह संभावना व्यक्त की जाती है कि इस जाति के प्राचीन नेता का नाम पुरु रहा हो। प्रख्यात इतिहासकार राहुल सांकृत्यायन ने भी अपनी पुस्तक "ऋग्वैदिक आर्य" में उल्लेख किया है कि पुरु जाति का नाम उसके प्रमुख नेता पुरु के नाम पर पड़ा।

इसी प्रकार, सिंघायच दयालदास द्वारा लिखित तथा श्री दशरथ शर्मा द्वारा संपादित ग्रंथ "पंवार वंश दर्पण" में पंवारों की विभिन्न वंशावलियाँ संकलित की गई हैं। इन वंशावलियों में आदि शक्ति से ब्रह्मा की उत्पत्ति, उनसे मरीच, मरीच से कश्यप, कश्यप से धुम ऋषि, उनसे राजा पल्ल और फिर राजा पुरुराय का उल्लेख प्राप्त होता है।

वर्णनानुसार, राजा पल्ल सरस्वती प्रदेश से पश्चिम की ओर जाकर बसे प्राचीन पुरुओं की शाखा के शासक थे। तो दूसरी ओर राजा पुरु सरस्वती-सिंध प्रदेश में निवास करने वाली वैदिक आर्य पुरु जाति के मूल राजा माने गए हैं।

यदि हम परमारों के उपलब्ध शिलालेखों का अध्ययन करें तो उनमें प्रायः यह उल्लेख मिलता है कि परमार पुरुष की उत्पत्ति ऋषि वशिष्ठ और ऋषि विश्वामित्र के मध्य हुए युद्ध के प्रसंग से जुड़ी है। इन शिलालेखों में वर्णित कथा के अनुसार, युद्ध में सहायता हेतु कामधेनु नंदिनी गौ अथवा यज्ञ से परमार पुरुष का प्रादुर्भाव बताया गया है।

अब यदि हम रामायण का अवलोकन करें, तो वहाँ वर्णन मिलता है कि वशिष्ठ की नंदिनी गौ के द्वारा जिन वीरों की उत्पत्ति हुई थी, वे वास्तव में पहलव थे। इस आधार पर यह संभावना व्यक्त की जा सकती है कि वंशावलियों एवं ख्यातों में उल्लिखित राजा पल्ल वही रहे हों, अर्थात् पहलवों के शासक।

पहलवों को प्राचीन ग्रंथों में पारद भी कहा गया है। “पारद” का अर्थ है पारसिक देश, अर्थात् पर्शिया (आज का ईरान)। अनुमान किया जाता है कि ऋषि वशिष्ठ ने युद्ध के अवसर पर इन्हीं पहलवों को सहायता के लिए बुलाया था।

वैदिक काल में ये पहलव मूलतः पुरु जाति से संबंधित थे ! पुरुओं की यह शाखा बाद के काल में पश्चिम दिशा में जाकर बस गई थी, और आवश्यकता पड़ने पर इन्हें पुनः बुलाया गया। संभवतः यही शाखा आगे चलकर परमार नाम से प्रसिद्ध हुई। इसलिए प्रमारो को पोवार या पंवार भी कहा गया है ! क्योंकि वे मूलतः पुरु जाती के थे !

मूल वैदिक ब्रह्म क्षत्रिय पुरु जाती के पौर लोग इधर सरस्वती प्रदेश में ही थे जिनके राजा को पुरु राय कहा जाता था ! देखा जाये तो पारसिक देश के पहलव भी पुरु जाती के होने से उनको भी पुरुराय यानि पुरु राजा कह सकते है ! परन्तु वे पहलव नाम से प्रसिध्द हो चुके थे ! और बाद में परमार ! परमारों के प्रताप के कारण कालान्तर में सिन्धु सरस्वती प्रदेश के समस्त पौरो को परमार कहना शुरू हो गया ! परमार वंश के लोग पोवार भी कहलाये और क्षत्रिय पोवार लोग प्रमार कहलाये! पंवार शब्द तो परमार का अपभ्रंश है !

नैनसी की ख्यात में दी गयी पंवारो की वंशावली में राजा पुरुराय का नाम आता है ! उसी प्रकार धार के मराठा पवार सरदारों पर लिखी किताब **“विश्वासराउ - प्रशस्ति व सेना सप्त सहस्त्री पवार - विजय”** में कनिराम भाट जैसे लोगो ने गाये दोहे का उल्लेख है जिसमे पुरुराय का भी उल्लेख आता है !

वह दोहा इस प्रकार है ---

करि बन्दन सुख के सदन , गौरीनंद गनेस !
कथु सुजस पुंव्वार कुल , बर दे बुध्दि बिसेस !! १!!

मालव धरनी माँह , धार नगर रजधानी !
वीर तखत पुंव्वार, कीरत जगदेव कहानी !!२!!

बिक्रमसा नरबीर , नगर उज्जेणी में नामी !

मुंज अरु नृप भोज , चतुर्दस विद्या ज्ञानी !!३ !!

जन्म लियो भरतरी जशा , देस भयो चहु दंड !
गुरु गोरख सिर कर धरयो, अमर नाम अखंड !!४ !!

पृथ्वी ठावी उज्जेणीपुर, धरा ठाविगढ़ धार !
कुल वर्णु पुरु राय को , पुहमि बड़ा पंवार !!५!!

यदि हम सन १८९४ में लिखित “महताब दिवाकर” नामक ग्रंथ का अवलोकन करें तो उसमें यह उल्लेख मिलता है कि सप्तऋषियों द्वारा किए गए यज्ञ से जिन महान वीर का प्रादुर्भाव हुआ था, उन्हें परमार की उपाधि अथवा संज्ञा प्रदान की गई।

वहीं उस परमार वीर का परिचय पुरुराय नाम से मिलता है। अर्थात्, इतिहास में वर्णित पहले महान वीर सम्राट पुरु जाति के ही थे, जिन्हें परमार की उपाधि प्राप्त हुई थी।

महताब दिवाकर के पृष्ठ ५१२ व ५१३ में दिया गया उल्लेख निम्नलिखित है -
अथ देवीं समुद्दिश्य प्रदत्ता याऽऽहुतिस्तया ।
चत्वारिंशत्करप्रांशुमार मारेतिशब्दवान् ॥ ३९ ॥
सरनिषोऽशमितखड्गहस्तोऽग्निकुण्डतः ।
समुत्तस्थौ महाभीमो वैरिवारणदारणः ॥ ४० ॥
तदा स ऋषिभिः प्रोक्तस्त्वं 'परान्मारये'ति च

'परमारे' ति संज्ञा *वै तदा तस्याभवद्भुविः ॥ ४१ ॥*
नृपस्य तस्य नामान्यत्पुरुरायेति विश्रुतम् ।
एतस्मादेव भूलोके परमारांन्वयोऽभत्ततः ॥ ४२ ॥
पुरुरायसुतः सांभनरायः पृथिवीपतिः ।
तत्सुतो रोतनरिखेश नृपः समभूतमः ॥ ४३ ॥
प्रियव्रतरिखेशाख्यः पुत्रः समजनिष्ट वै ।
तदात्मजो ध्रुवरिखेशो बभूव गुणाग्रणीः ॥ ४४ ॥.......

यदि वंशावलियों का अध्ययन किया जाए तो लगभग सभी वंशावलियों में सम्राट पुरु के पूर्वज के रूप में ब्रह्मा, मरीचि और कश्यप आदि का उल्लेख मिलता है। इससे यह तथ्य स्पष्ट होता है कि यह सम्राट वास्तव में वैदिक पुरु जाति में जन्मे थे।

वंश परंपरा के आधार पर यह भी समझ में आता है कि इनके मूल पुरुष ऋषि कश्यप थे। यही कारण है कि ३६ कुल पोवार अपना गोत्र कश्यप बताते हैं, और यह ऐतिहासिक दृष्टि से भी उचित प्रतीत होता है। ऋषि कश्यप से ही देवताओं, सूर्यवंश, चंद्रवंश और अनेक ऋषियों का उद्गम माना गया है।

संभावना है कि प्राचीन ग्रंथों में कश्यप का नाम कहीं-कहीं प्रतीकात्मक या गूढ़ रूप में उल्लिखित किया गया हो। इसी वंश में पुरुराय उत्पन्न हुए, जो ऋग्वेदीय पुरु जाति के महान राजा थे।

विशेष तथ्य यह है कि प्राचीन पौर ब्रह्मक्षत्रिय कुलों के नाम आज भी संस्कृत रूप में पोवार जाति के भीतर प्रचलित हैं। पोवारों के कुलनामों का संस्कृत रूप में सुरक्षित रहना इस बात का प्रमाण है कि यह समुदाय प्राचीन वैदिक परंपरा से संबंधित है।

कालांतर में पौर लोग गुजरात, मारवाड़, राजपुताना और मालवा में लंबे समय तक निवास एवं शासन करते रहे। किंतु लगभग सन् १३०० के बाद पौर क्षत्रिय कुल मालवा से विस्थापित होकर विभिन्न दिशाओं में चले गए। इनमें से अनेक समूह राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और पूर्व महाराष्ट्र की ओर बढ़े, जहाँ उन्होंने अपने परिवारों और परंपराओं को सुरक्षित रखा।

बड़ी संख्या में पौर क्षत्रिय सन् १७०० के आसपास मध्य भारत की वैनगंगा घाटी की ओर आए, और यहीं बस गये । समय के साथ ये पोवार स्थानीय जीवन-पद्धति में रच-बस गए, किंतु अपनी विशिष्ट पहचान को भी बनाए रखा।

इतिहासकार लिखते हैं कि पोवारों की पहचान उनके व्यक्तित्व और स्वरूप से सहज ही की जा सकती है। Ethnological Report, Nagpur (1868) के पृष्ठ 50 पर स्पष्ट उल्लेख है -

"पोवार सामान्यतः गौरवर्णीय और सुंदर होते हैं। उनकी शारीरिक बनावट और सामान्य दिखावट से उन्हें तुरंत पोवार के रूप में पहचाना जा सकता है।"

यह तथ्य केवल ऐतिहासिक लेखन तक सीमित नहीं, बल्कि आज भी सामाजिक वास्तविकता में परिलक्षित होता है।

<u>पोवारो को परमार कहने का एक और कारण ?</u>

पर्शियन इतिहासकारों के अनुसार परमार वंश की उत्पत्ति धुमराज से मानी जाती है। धुमराज के वंशजों ने पाँचवीं पीढ़ी तक शासन किया। पाँचवीं पीढ़ी के शासक राजा पुत्रज (या पूतराज) की अकाल मृत्यु हुई और वे निपुत्रिक अवस्था में संसार से चले गए।

परमार परिवार का रिक्त हुआ राजसिंहासन अंततः मालव गणों द्वारा आदित्य पोवार को प्रदान किया गया। इसका मूल कारण यह था कि परमार वंश का उद्गम किसी न किसी रूप में प्राचीन पुरु अथवा पौर जाति से सम्बद्ध माना जाता था। परमार (अथवा पह्लव) राजा के नेतृत्व में सरस्वती प्रदेश के पौर क्षत्रिय बड़ी संख्या में उस महत्त्वपूर्ण युद्ध में सम्मिलित हुए थे, जो ऋषि वशिष्ठ और ऋषि विश्वामित्र के मध्य घटित हुआ था। इस संघर्ष में परमार कहलाए पह्लव राजा धुमराज ने नेतृत्व किया। धुमराज ने युद्ध से पूर्व पवित्र अर्बुदगिरि (आबू पर्वत) पर दृढ़ प्रतिज्ञा ली थी, जो उनके साहस और संकल्प का प्रतीक मानी जाती है।

परमार पुत्रराज के बाद परमार सिंहासन पर बैठे आदित्य पोवार के वंश से आगे चलकर सम्राट विक्रमादित्य और राजा भोज जैसे महान शासक उत्पन्न हुए।

इसी कारण पोवारों को परमार भी कहा जाने लगा। हालाँकि प्राचीन पर्शियन, ग्रीक और पश्चिमी ऐतिहासिक अभिलेखों में इन्हें अलग-अलग रूपों में - पौर, पुवार, पोवार, पौरु, पुरु - के नाम से उल्लेखित किया गया है।

धुमराज के परिवार के अन्य सदस्य भी अवश्य रहे होंगे, जो आज तक अपना कुल नाम परमार लिखते हैं। इस परमार परिवार की लगभग ३५ उपशाखाओं के वंशज वर्तमान में मालवा, राजपूताना, गुजरात आदि क्षेत्रों में विभिन्न स्थानों पर निवास करते पाए जाते हैं। ये सभी एक ही कुल की अलग-अलग शाखाएँ मानी जाती हैं। इनमें से कुछ परमार कुल के लोग स्वयं को पंवार भी कहते हैं। इसके पीछे का कारण ऐतिहासिक सन्दर्भों में निहित है।

परमार एक विशेष परिवार का नाम है,
जबकि पौर/पोवार एक संपूर्ण ब्रह्मक्षत्रिय जाति का द्योतक है।

मध्य भारत में प्रचलित ३६ कुल पोवार इस व्यापक क्षत्रिय जाति के अंतर्गत आते हैं। इतिहासकारों के अनुसार, मध्य भारत के ये ३६ कुल पोवार ही पंवार राजपूतों की सर्वाधिक बड़ी शाखा माने जाते हैं।

<u>परमार, पंवार और पोवार अन्य जातियो में क्यों पाए जाते हैं?</u>

इसके पीछे मुख्यतः दो ऐतिहासिक कारण माने जाते हैं -

(१) निरंतर आक्रमण और युद्ध की परिस्थितियाँ :

प्राचीन काल से ही उत्तर भारत और मध्य भारत आक्रमणों तथा युद्धों से प्रभावित रहा। ऐसे समय में अनेक परिवार और समुदाय अपने मूल स्थानों से विस्थापित होकर विभिन्न क्षेत्रों में जाकर बसते रहे। जब परमार या पंवार किसी नए प्रदेश या स्थानीय समाज में समाहित हुए, तो उन्होंने वहाँ की , समाहित हुए समाज की प्रचलित पहचान अपना ली।

(२) पौर राष्ट्र के भिन्न समुदाय के लोग :

इतिहास में पौर राष्ट्र का उल्लेख स्पष्ट रूप से मिलता है। पौर अथवा पंवार राष्ट्र से जो लोग अन्य प्रदेशों की ओर गए, वे प्रायः स्वयं को पंवार या परमार कहने लगे। यह वैसा ही है, जैसे गुजरात के लोग गुजराती, कश्मीर के लोग कश्मीरी और बंगाल के लोग बंगाली कहलाते हैं। पौर राष्ट्र में केवल पंवार ही नहीं, बल्कि अन्य जातियाँ भी सम्मिलित थीं, जो समय के साथ स्थानांतरित होकर अपने-अपने नए क्षेत्रों में जाने के बाद अपनी पंवार पहचान के साथ प्रचलित हो गयी ।

निष्कर्ष -

अनगिनत संस्कृत साहित्य, ऐतिहासिक दस्तावेज़, ग्रंथ, अभिलेख, काव्य और शिलालेखों के गहन अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि वर्तमान के ३६ कुल क्षत्रिय पोवार समुदाय का उद्गम अत्यंत प्राचीन है। ये लोग ऋग्वेद में उल्लिखित पुरु जाति के वंशज हैं, जो सरस्वती नदी के तटों पर निवास करते थे और जिनका साम्राज्य उस काल में आज के ईरान से लेकर उत्तरी भारत तक फैला हुआ था। इसी ऋग्वैदिक पुरु जाति से इंद्र, सूर्य, चन्द्र , वरुण, अग्नि जैसे देवगण; सप्तर्षियों में अत्रि, कश्यप और वशिष्ठ जैसे पौर ऋषि; तथा इक्ष्वाकु और पुरु जैसे महान सम्राट उत्पन्न हुए। यही सब प्रवर के रूप में विख्यात हुए।

कालांतर में ऋग्वैदिक पुरु जाति के वंशज पौर लोग लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व मालवा क्षेत्र में आए। उज्जयनी से इनकी शासन व्यवस्था कार्यान्वित होती थी !

आदित्य पोवार (पौर) से लेकर सम्राट विक्रमादित्य, महाराजा भोज तथा महाराजा उदयादित्य जैसे महान शासकों तक यह वंश अपनी शक्ति, वैभव और सांस्कृतिक योगदान के लिए विख्यात रहा। इन शासको का राजपरिवार वर्तमान क्षत्रिय पोवार जाती का ३६ कुल में से ही कोई एक कुल होना चाहिए ! मालवा में स्थापित इस राजवंश को “परमार” उपाधिनाम से विशेष ख्याति प्राप्त हुई। परमार / पंवार नाम के अंतर्गत ही पोवारों ने मालवा, राजपूताना और गुजरात जैसे क्षेत्रों में दीर्घकाल तक प्रभावशाली शासन किया, और इसी वंश परंपरा से वर्तमान पोवार क्षत्रिय समाज की गौरवशाली परंपरा जुड़ी है।

धारानगर के परमार या पंवारों के अंतिम शासक राजा महलकदेव को सन १३१० के दरम्यान शहाबुद्दीन घोरी से हुए युद्ध में पराजय का सामना करना पड़ा। इस पराजय के बाद परमार वंशीय ३६ कुल क्षत्रिय पंवार समुदाय धारानगर से पुनः राजस्थान के मारवाड़ क्षेत्र की ओर लौट आया।

मुगल काल में, विशेषतः अकबर और शाहजहाँ के शासनकाल में, अन्य राजपूत वंशों द्वारा इन्हें मारवाड़ से हटाया गया। इस निष्कासन के बदले इन्हें जागीरें प्रदान किए जाने का उल्लेख तत्कालीन अभिलेखों में मिलता है। इसके पश्चात पंवार जाति राजस्थान और गुजरात की सीमा पर जाकर बसी और लगभग १६६५ तक वहीं रही।

बाद में ये लोग बुन्देलखण्ड पहुँचे और वहाँ के वीर शासक राजा छत्रसाल के साथ सैन्य अभियानों में सक्रिय रहे। छत्रसाल के नेतृत्व में पंवार योद्धाओं ने लंबे समय तक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

सन् १७०० के आसपास गोंड राजा बख्त बुलंद ने, इस्लामिक अधिपत्य से मुक्ति पाने हेतु, पंवार और बुंदेला सैन्य दलों को अपने पक्ष में आमंत्रित किया। पंवार सेना ने उसे सत्ता दिलवाने में निर्णायक सहयोग प्रदान किया। राजा बख्त बुलंद ने अपनी रक्षा और क्षेत्रीय नियंत्रण के उद्देश्य से पंवार सरदारों को मध्यभारत के नागपुर क्षेत्र में नगरधन, भंडारा जिले का आंबागढ़, प्रतापगढ़, सानगढ़ आदि किले प्रदान किए। इन दुर्गों से पंवार सरदार क्षेत्र की सुरक्षा और शासन व्यवस्था पर दृष्टि रखते थे।

सन १७५० के दरम्यान मराठा शासन स्थापित हुआ और पंवार लोग अपने २००० घुड़सवारो की सेना के साथ मराठाओ के साथ कटक के युध्द में गये जहा उन्होंने जीत हासिल की ! उसके बदले उनको पूर्व महाराष्ट्र का वैनगंगा घाटी का क्षेत्र में मिला! उन्होंने बुदेलखंड में बसे अपने परिवारों को इधर बुला लिया ! करीब १७५० के बाद १५००० पंवार संख्या का समूह वहा से इधर आया व् सबसे पहले नगरधन किले में रुका और वहा से पूर्व महाराष्ट्र की ओर जाकर प्रस्थापित हुआ ! उसके बाद से पोवार या पंवार इसी क्षेत्र में बस गये ! ब्रिटीश काल में काफी पंवार परिवार सरकार के आमंत्रण पर बरघाट, बैहर क्षेत्र में जाकर बस गये ! इसलिए बालाघाट , सिवनी , भंडारा (वर्तमान गोंदिया + भंडारा जिला) में जमीदारी , पटेली , मालगुजारी पंवारो के अधीन थी ! आज इन चार जिलो में करीब १२ लाख लोग बसे हुए है जो प्राचीन पौर (अब पोवार कहलाते है) क्षत्रियो की सबसे बड़ी संख्या है और मानव सभ्यता की प्राचीन धरोहर है !

अंततः निष्कर्ष यह है की

ये पोवार लोग ऋग्वेद में वर्णित आर्यों की पांच जातीयो (पंचजन) में से पुरु नामक एक जाति या जनों के वर्तमान रूप है !

अगले पन्नो पर दिए गये सन्दर्भ महत्वपूर्ण है ! इन संदर्भो से बहुत कुछ स्पष्ट होता है जिसे पाठक स्वयम समझ सकते है की इतिहास व् ग्रन्थ क्या कहते है ! ---

---

संदर्भ

ऋग्वेद के पंचम मंडल के ७४ वे सूक्त के ४ थे श्लोक में पौर लोगो का   का उल्लेख आता है !

पौरं चिद्धयुदप्रुतं पौर पौराय जिन्वथः।
यदीं गृभीततातये सिंहमिव द्रुहस्पदे ।।४।।

अर्थात

*हे अश्विनीकुमारो ! तुम जल बरसाने वाले बादलो को **पौर** जहा रहते है उनके पास भेजो ! शुर जिस प्रकार गरजते हुए सिंह को मार गिराता है, उसी प्रकार यज्ञ कार्य में व्यस्त पौरो के निकट तुम बादलो को बरसाओ!*

ऋग्वेद में पंचम मंडल के ७३ व् ७४ वे सूक्त के ऋषि <u>पौर आत्रेय</u> है ! अत्री ऋषि सप्तर्षियो में से एक है !

ऋग्वेद में देवताओ को पौर या पुरु कहा गया है !

जैसे
पिबापिबेदिन्द्र शूर सोमं मन्दनन्तु त्वा मन्दिनः सुतास
पृणन्तस्ते कुक्षी वर्धयन्त्वित्था सुतः <u>पौर इन्द्र</u>माव.. (२-११-११)

हे शूर इंद्र! तुम बार-बार सोमरस पिओ. मद करने वाला सोमरस तुम्हें प्रसन्न करे. सोम तुम्हारे पेट को भरकर तुम्हारी वृद्धि करे. पेट भरने वाला सोम तुम्हें तृप्त करे. (२-११-११)

ऋग्वेद में पांच प्रकार के जन समूहों का उल्लेख आता है और वे थे यदु, तुर्वश, अनु, द्रुह्यु एवं पुरु ! यानि वैदिक काल में पुरु नामक जन समूह था !
इससे सबंधित श्लोक है

यदिन्द्राग्नी यदुषु तुर्वशेषु यद् द्रुह्यष्वनुषु पूरुषु स्थः
अतः परि वृषणावा हि यातमथा सोमस्य पिबतं सुतस्य(१-१०८-८)

अर्थात
*हे इंद्र और अग्नि! यदि तुम यदु, तुर्वश, अनु, द्रुह्यु एवं **पुरु जन समूह** के बीच स्थित हो, तब भी इन समस्त स्थानों से आओ एवं निचोड़ा हुआ सोमरस (बल व् यौवन दायक विशेष औषधि) पिओ!*

ऋग्वेद में पौर राजा का भी उल्लेख है !
जैसे

शग्धी नो अस्य यद्ध पौरमाविथ धिय इन्द्र सिषासत
शग्धि यथा रुशमं श्यावकं कृपमिन्द्र प्रावः स्वर्णरम्. ! (८-३-१२)

अर्थात -
*हे इंद्र! स्तोत्रों के द्वारा सेवा करने वाले हमारे यजमान को वह धन दो, जिस धन के द्वारा तुमने **राजा पौर** की रक्षा की थी. तुमने जिस प्रकार रुशम, श्यावक एवं कृप की रक्षा की थी, वैसे ही शोभन हवि वाले यजमान की रक्षा करो.*

ऋग्वेद के निम्नलिखित ऋचाओ में पुरु , पुरुवारं आदि शब्द आये है ! संस्कृत आकलन के लिए कही कही बहुत कठिन लगती है ! जैसे यहाँ राजा दिवोदास को पुरु दिवोदास कहा गया है ! ऋग्वेद की ऋचाये अनेक गूढ़ अर्थ लिए हुए

है! विद्वान् एक ही ऋचा का अलग अलग अर्थ निकालते है ! यहा निचे दी गयी ऋचाओ में पुरु पुरुवारं शब्द का उपयोग हुआ है !

त्वमिमा वार्या पुरु दिवोदासाय सुन्वते.
भरद्वाजाय दाशुषे.. (६-१६-५)

तन्नस्तूरिपमद्भुत पुरु वारं पुरु त्मना.
त्वष्टा पोषाय वि ष्यतु राये नाभा नो अस्मयु:.. (१-१४२-१०)

पुरूण्यग्ने पुरुधा त्वाया वसूनि राजन्वसुता ते अश्याम्.
पुरूणि हि त्वे पुरुवार सन्त्यग्ने वसु विधते राजनि त्वे ! (६-१-१३)

शिक्षा ण इन्द्र राय आ पुरु विद्वाँ ऋचीषम. अवा नः पार्ये धने..
(८-८१ १)

एता ते अग्न उचथानि वेधोऽवोचाम कवये ता जुषस्व.
उच्छोचस्वे कृणुहि वस्यसो नो महो राय: पुरुवार प्र यन्धि.. (४-२-२०)

उप यो नमो नमसि स्तभायतन्नियर्ति वाचं जनयन्यजध्यै.
ऋञ्जसान: पुरुवार उक्थैरेन्द्रे कृण्वीत सदनेषु होता.. (४-२१-५)

अस्य श्रिये समिधानस्य वृष्णो वसोरनीकं दम आ ररोच.
रुशद्वसान: सुदृशीकरूप: क्षितिर्न राया पुरुवारो अद्यौत्.. (१५)

यजमान के कल्याण के निमित्त प्रज्वलित, कामवर्षी एवं निवास स्थान देने वाले अग्नि की ज्वालाएं यज्ञशाला की ओर चमकती हैं. तेजधारी, रमणीय बल वाले व

अनेक यजमानों द्वारा स्तुत अग्नि इस प्रकार प्रकाशित होते हैं, जिस प्रकार अश्व आदि धन से राजा शोभा पाता है. (४.५.१५)

किताब -राजपूत इतिहास का अध्ययन - चालुक्यों की उत्पत्ति (प्रकाशन १९३७)
लेखक -श्री रंजीत सिंह सत्याश्रय और डॉ. एन. के. दत्त, एम.ए. पीएच.डी. (प्रधानाचार्य, संस्कृत कॉलेज, कलकत्ता (कार्यालय).) पृष्ठ ७२ पर लिखते है ---
ब्राह्मण कुल और अग्नि कुल में कोई अंतर नहीं है। पौराणिक कथाओं के अनुसार मानव जाति के सबसे पुराने सात महान ऋषि आग से पैदा हुए थे। पुराणों में अग्निवंश का वर्णन है ! अग्नि-कुल शब्द ब्राह्मण मूल को निरूपित कर सकता है। चार अग्निकुलों में से कम से कम तीन कुल मूलतः ब्राह्मण होने का एपिग्राफिक सबूत हैं।

किताब - आदि भारत (प्रकाशन १९५३)
लेखक -अर्जुन चौबे कश्यप पृष्ठ क्रमांक ४७२ पर लिखते है -
चंद ने अनुश्रुतियो के आधार पर तीन प्रसिध्द राजपूत कुलो अर्थात चौहान (चाहमान) पोवार (परमार) तथा सोलंकी (चालुक्य) को अग्निकुलसे सबंधित किया है !

किताब - पुराणों में भारतोत्तर वंश (प्रकाशन १९८८)
लेखक -कुंवरलाल व्यासमीस्य पृष्ठ क्रमांक ८६ पर लिखते है -
आइने अकबरी में आदित्य पोवार और विक्रम का अंतर ४२२ है !

किताब – Punjabi Musalmans (प्रकाशन The Book House)
लेखक – Lt. Col. J.M. Wikeley पृष्ठ क्रमांक 113 पर लिखते है –

The Kathias are found in the Ravi valley of the Multan and Sahiwal districts, also in the south of the Jhang district.

***The Kathias claim to be Punwar Rajputs** descended from a Rajput prince named Kathia who lived about the time of their conversion to Islam, in the reign of the Emperor Akbar.*

(३६ कुल पोवारो में से एक कुल कटरे को वंशावली की पोथियो में काठी क्षत्रिय कहा गया है !)

तथा पृष्ठ क्रमांक १३१ /१३२ पर लिखते है –

The Panwar is found in the Bahawalpur State, in Multan, Sahiwal and Lahore.

The Panwar or Pramara was once the most important of the Agnicula Rajputs. "The world is the Pramaras" is an ancient saying denoting their extensive sway, and the Nankot Marusthali, extending along and below the Sutlej from the Indus almost to the Jamna, signified the Maru Asthal or arid territory occupied by them. But many centuries have passed since they were driven from their possessions, and in 1826 they held in independent sway only the small State of Dhat in the desert.

Ranghars (Musalman Rajputs).

The Musalman Rajputs of the Ambala Division are commonly known as Ranghars. After partition they have settled down in the Lahore, Sheikhupura and Multan districts.

They belong chiefly to the Batti, Chauhan, Ponwar, Jatu, Taoni and Tonwar clans. They are much superior in quality to the Eastern Rajput.

पृष्ठ क्रमांक ७१

The Baghial tribe is found chiefly in the Rawalpindi district, where they occupy five villages in the Giijar Khan tehsil. There appear to be a few also in the Jhelum, Gujrat and Gujranwala districts

The Baghial and Bangial appear to be the same tribe, those members of it which are in the Rawalpindi district are classed as Rajputs. ***They describe themselves as being Punwar Rajputs.***
(३६ कुल पोवारो में से एक कुल बघेला है !)

पृष्ठ क्रमांक ९५

The Hun are located chiefly in the Rawalpindi tahsil of the Rawalpindi district, there are also a few in the Gujar Khan tahsil and some in Hazara.
The Hun are Panwar Rajputs descended from a Raja Judgeo*. The tribe is a very small one.*
(३६ कुल पोवारो में से एक कुल हरणखेडा को वंशावली की पोथियो में हुण क्षत्रिय कहा गया है !)

किताब – THE EARLY HISTORY OF INDIA , FROM 600 B.C. TO THE MUHAMMADAN CONQUEST INCLUDING THE INVASION OF ALEXANDER THE GREAT (प्रकाशन OXFORD AT THE CLARENDON PRESS 1914)
लेखक – VINCENT A. SMITH पृष्ठ क्रमांक ६० /६१ पर लिखते है –

Curtius, viii, 12. The country of Poros lay between the Hydaspes (Jihlam) and the Akesines (Chinab), and contained 300 towns (Strabo, xv, 29).

पृष्ठ क्रमांक ७३ –

***Another Poros**, nephew of the defeated monarch, and ruler of a tract called Gandaris, sent envoys promising allegiance to the invincible invader, and sundry independent tribes*

*The Hydraotes (Ravi) river having been crossed without difficulty, Hephaistion was sent back in order to reduce to obedience the **younger Poros**, who had revolted owing to feelings of resentment at the excessive favour shown to his uncle and enemy.*

(इस किताब में दो पुरु या पौर राजाओ का उल्लेख है)

--

किताब – The Calcutta Review , Volume XLVIII (प्रकाशन १८६९)
पृष्ठ क्रमांक १०८ पर लिखा मिलता है –

*Kissen singh the present ruler of Bhagal in the representative of very ancient family being the 75th in uninterrupted descent . **The family are Rajpoots of the Powar clan or Gote .***

--

किताब Proceedings of the BOMBAY GEOGRAPHICAL SOCIETY. (प्रकाशन AUGUST 1838)

पृष्ठ क्रमांक ५५ –

***When the Kattees first settled in Pawardess** , a Rajput named Wala was an inhabitant of it .*
(यहाँ पवार देश का उल्लेख है !)

--

किताब *RĀS MĀLĀ - VOL.I HISTORY OF GUJARAT (Oxford university PRESS London : Humphrey Milford 1924)*

लेखक - Alexander kinloch forbes , पृष्ठ क्रमांक १५५ -

The more famous bards , the bhats and Charuns bear to Hindoos of better caste , roam about the country subsisting upon the alms of their clients and delighting them in return with the wild and rude tales , half prose and half verse , which they chants to the accompaniment of a species of guitar called Saringee **–**

In Sindh is the country of Pawur *of which Ror Pawur was Raja . A daughter was born to him ….*

पृष्ठ क्रमांक २८३ -

Moojo Risking his life for the sake of a bird , won fame . The north Star may move , Meroo may fall , Girnar revolve , but the Purmar cannot turn his back to the foe . …..

The katees were the vassels of the Soomuree King of Sindh and Lived in ***Pawur land .***

(The kathis were a nomad Tribe , probably from central Asia . Arrian mentions a nation with a similar name which Alxander encountered on the Hydraotes . They seem to have been gradually forced southwards and to have arrived in Kathiawar about AD 1000.)

(इस किताब में पौर देश तथा पौर राष्ट्र का उल्लेख है)

किताब – Journal Asiatique ou Recueil De Memories (year 1854)

पृष्ठ क्रमांक १८९ व् १९० -

Le Bhódja cité dans le Mahabharata appartenait à la race des Yadavas, dont Krichņa tirait aussi son origine; mais le Bhódja dont il est ici question descendait des Phours, Pauvars (Porus). Le premier roi de cette famille qui régna à Malwa (d'après la liste de Tieffenthaler) serait Adat-Pauvar (Aditya- Paour), qui monta sur le trône 541 ans avant la mort du Vikramaditya des poëtes, c'est-à-dire précisément la première année de l'ère chrétienne. Il y a sans doute quelque erreur dans cette chronologie; cependant on peut admettre

que cet Adat-Pauvar fut le Vikramaditya qui fonda une ère, comme on dit dans l'Inde. Cette opinion se rapproche beaucoup de celle qu'a exprimée M. Reinaud dans son savant mémoire sur l'Inde. Si l'on s'en rapporte aux calculs que nous venons d'e noncer, on assigne une date plausible, sinon certaine, à deux des huit princes que l'on a qualifiés dans l'Inde du nom de Vikramaditya, pour la plus grande confusion de toutes les chronologies.
Quand la ville d'Oudjaînî cessa d'être la résidence des sou-verains de Malwa, Dhara devint la capitale. Sindhoula, père de Bhodja, habitait cette dernière ville, que son fils devait rendre si célèbre

हिंदी अनुवाद –

*महाभारत में उल्लेखित भोज यादवों की जाति से संबंधित थे, जिनसे कृष्ण की उत्पत्ति भी हुई थी; लेकिन यहां जिस भोज की बात हो रही है, वह **पौर्स, पौवार (पोरस)** का वंशज है। इस परिवार का पहला राजा जिसने मालवा में शासन किया (टिफ़ेंथेलर की सूची के अनुसार) **आदित्य -पौवार (आदित्य-पौर)** होगा, जो विक्रमादित्य की मृत्यु से 541 वर्ष पहले सिंहासन पर बैठा था । यानी ठीक-ठीक ईसाई युग का पहला वर्ष। इस कालक्रम में निःसंदेह कुछ त्रुटि है; हालाँकि हम यह स्वीकार कर सकते हैं कि **यह आदित्य पौवार ही विक्रमादित्य थे** जिन्होंने एक युग की स्थापना की, जिसे भारत में विक्रम संवत कहते हैं। यह राय श्री रेनॉड द्वारा भारत पर अपने संस्मरण में व्यक्त की गई राय के बहुत करीब है। यदि हम उन गणनाओं का उल्लेख करते हैं जो हमने अभी बताई हैं, तो हम उन आठ राजकुमारों में से दो को, जो निश्चित नहीं हैं, एक प्रशंसनीय तिथि बताते हैं; जिन्हें भारत में विक्रमादित्य के नाम से जाना जाता है, जो कि सभी के लिए समयसीमा का बहुत बड़ा भ्रम है !*
जब उज्जयनी शहर मालवा के शासकों का निवास स्थान नहीं रहा, तो धारा राजधानी बन गई। भोज के पिता सिंधूल बाद वाले शहर में रहते

थे, जिसे उनके बेटे ने इतना प्रसिद्ध बनाया था। (रिसर्च ऑन इंडिया के खंड १ में इस राजधानी के बारे में कहा गया है:) धार, शहर और गढ़। बहुत अच्छी तरह से किलेबंद था वह हिंदू राजा भोज का निवास था !

किताब - महाराष्ट्र कवी चरित्र , भाग दूसरा (प्रकाशन १९१३)
लेखक - जगन्नाथ रघुनाथ आजगावकर
पृष्ठ क्रमांक ७४
इस पुस्तक में सन १७५४ में कोल्हापुर के कवि मुरारी द्वारा लिखित काव्य में **पौर वंशी राजा** का उल्लेख आता है ! लेखक मुरारी कवि के काव्य उल्लेखित **पौर वंशी राजा यानि पंवार वंशी** राजा होना चाहिए ऐसी सम्भावना व्यक्त करते है !

*सुजान **राजा पौरवंशी** ! सत्यशील सद्गुण राशी*
पवित्र कमलापुर वासी ! प्रियभक्त शिवाचा !!६० !!

फ्रेंच किताब - Bibliotheque Orientale ou Dictionnaire Universel (year 1778)
पृष्ठ क्रमांक ९९ -

POUR – on Por , Ceft le nom de Porus , Roy des Indes , Vaincu par Alexandre
(हिंदी अनुवाद - पौर - सिकंदर द्वारा पराजित भारत के एक राजा पोरस का नाम)
Poursia – Les Arabes appellent ainfi la Pruffe .
*(*पौरशीय राष्ट्र कालान्तर में पारसिक -- पर्शिया कहलाया होगा)

किताब- Journal of the Anthropological Institute of Great Britain and Ireland Volume XXV , published from London in year 1896 .
पृष्ठ क्रमांक १६७ /१६८ -

The castes in census reports are divided into classes , each class have many sub divisions . Thus class A Agricultural includes I – Military and dominant agriculral castes, II – other agricultural castes, III the forest & Hill Tribes. ….
The Marathas and Rajpoots are the Great Military Tribes , ***The Powars , a sub division of the Rajpoots ,*** *rank high as agriculturists and very skillful in irrigation works .*

किताब - History of the Rise of the Mahomedan Power in India Till the year AD 1612 Translated from the Original Persian of Mahomed Kasim Ferista , Volume IV
लेखक / अनुवादक - John Briggs
इस किताब में पृष्ठ क्रमांक ५१४ पर पोवार को उर्दू में क्या लिखा है बताया गया है

Powar - پوار
उर्दू भाषा के जानकारो के अनुसार इस پوار शब्द का अर्थ उर्दू में पावार होता है ! उदयपुर के निलकंठेश्वर महादेव मंदिर में पाए गए शिलालेख में भी ***पावार*** *शब्द लिखा पाया गया है !*

किताब - Journal of the United Service Institution of India (year 1921)
पृष्ठ क्रमांक ३३५

According to the legend , the Parmar or Powar received Dhar and Ujjain as his heritage , to the Solanki was assigned Anhilpura , to the Pariar the desert regions West of Abu , and the North was given to the Chohan . Of the thirty six royal races of Rajputs it is said the ***fire – born are the greatest****, the rest were born of women,* ***while these owe their origin to the gods themselves.***

(अग्निवंशी क्षत्रिय अग्नि देवता से उत्पन्न है और अग्नि को ऋग्वेद में पुरु कहा गया है !)

किताब -Travels in Western India   (year 1839)

लेखक – James Todd

पृष्ठ क्रमांक २१८

I have elsewhere stated my opinion, that the name of one of the oldest and most powerful tribes of India, namely, the Pramara, pronounced ***Powar*** *(sovereigns of Oojein and Dhar from the remotest period), gave occasion to the corruption of the name of the tribe to a proper name, both of this prince, the correspondent of Augustus, and of the opponent of Alexander. I can also prove that the supreme title of Rana did belong to this family of Ozene, and is still borne by the deposed prince of Omerkote in the Desert, of the Soda tribe, one of the most conspicuous subdivisions of the Pramaras, at one time sovereigns of all Western India from the Sutledge to the ocean. The ancient title of the princes of Méwar was Rawul, and that of Rana was assumed when they overcame the Rana of Mandore, the capital of Maroodés, in the thirteenth century.*

किताब -Annals & antiquities of Rajasthan   (year 1839)

लेखक – James Todd

पृष्ठ क्रमांक १४६४

Annals of Haravati Bundi –

Angatsi, The Hun – In ancient times **Raja Hun** , said to be of **Pramara Race** , was Lord of the Patar and held his court at Menal .

----------------------------- --

किताब –Journey through the Kingdom of Oude in 1849-1850 (published in year 1858)
लेखक – W H Sleeman

पृष्ठ क्रमांक २३७

The Bhuderee Family give their daughters in marriage to the Bugheela Rajahs of Rewa and the Powar Rajahs of Ocheyra who are considered to be shade higher in caste than they are among the Rajpoots .

किताब – Panjab Castes (chapter in Report of Census of the Panjab 1883 by Sir Denzil Ibbetson)
(Published from Lahore in year 1916)

पृष्ठ क्रमांक १७५

The Kathia, Khagga, and Hans.—*The Kathia is another of the Great Ravi tribes, and comes next in importance among them to the Kharral. It is not shown in our tables as a separate caste, and nobody seems to have returned himself as Kathia. But there are 3,878 men in Montgomery and 1,972* ***in Multan who have returned their caste as Punwar*** *; and as the* ***Kathias claim to be Punwar Rajputs,*** *and were so entered in the settlement, it is probable that these are the Kathias. This is the explanation given by the Deputy Commissioner of Montgomery after local inquiry. These men have been included under the head Rajput in our tables. The Kathias are almost confined to the Ravi valley of the Multan and Montgomery districts ; but they hold a considerable area in the south of Jhang, which they are said to have acquired from the Sial in return for aid afforded to the latter against the Nawab of Multan. They are supposed to be the same people as the Kathaei, who In their stronghold of Sangala so stoutly resisted the victorious army of Alexander.*

महावीर वर्धमान के चरित्र पर सन ११३३ में कवी विबुह श्रीहर द्वारा लिखीत प्राकृत ग्रन्थ **“वड्ढमान चरिउ”** पर आधारित पुस्तक में **पउर , पवर का संस्कृत अर्थ प्रवर होता है !**

१० वी सदी के जैन धर्मीय प्राकृत साहित्य पर आधारित **“सावयधम्मदोहा” (प्रकाशन १९३२)** नामक पुस्तक में **पउर का संस्कृत अर्थ प्रवर होता है !**

श्री हेमचंद्राचार्य कृत पुस्तक “प्राकृतव्याकरणम” में पौर को प्राकृत में पउरो / पउर जनों कहा जाता है ऐसा सुत्त /सूक्त ८ -०१ -१६२ बताया गया है !

प्राकृत भाषा पर लिखित एक किताब “ सार्थ प्राकृत प्रकाश” (सन १९००) के पृष्ठ क्रमांक ७ पर संस्कृत शब्द पौर का अर्थ प्राकृत में पउर होने का उल्लेख है !

जैन साहित्य में वसुनंदी - श्रावकाचार नामक प्राकृत ग्रन्थ में पउर यानि संस्कृत में पौर होता है तथा पवर यानि प्रवर (उत्तम श्रेष्ठ) होता है !

किताब - A Sanskrit English Dictionary (first published in year 1899)

लेखक - Sir Monier Williams , Boden Professor of Sanskrit , fellow of Oxford

पृष्ठ क्रमांक ६७१

<u>पौर – Name of Soma , Name of Indra , of Aswins , of Rishi , of a Dynasty ,</u>

पौर – Belonging to town , a Townsman

पृष्ठ क्रमांक ६४२

पुरु - a man , people , **name of tribe** , a class of demons , an ancient prince , a descendant of Atri and author of Rigveda , **a son of Manu ,**

किताब -Living in Truth , Archaeology & the Patriarchs Part II

Chapter 17-33 (The Amarna Period)

लेखक - Charles N Pope

पृष्ठ क्रमांक 2

Yuya – Son of King Amenhotep II

पृष्ठ क्रमांक 87

Yuya is perhaps the commissioner Pawura (The Great One)
(यह संदर्भ प्राचीन इजिप्त से सबंधित है)

किताब - Narrative of a Journey Overland from England by the Continent of Europe , Egypt and the Red Sea to India including Residence there and Voyage home in the year 1825-28

लेखक - Mrs Colonel Elwood

पृष्ठ क्रमांक 195

*The Province of Cutch is much subdivided. The Bhooj the capital stands in Cutch proper . **On the North are Pawur** and Putchum .*

किताब - Ethnography

लेखक - Sir Athelstane Baines

पृष्ठ क्रमांक 44

*Among the tribes belonging traditionally to this part of India may be counted the Kathi, though in the present day they are found under this title only in the western peninsula to which they have given their name, and even there in but small numbers. **In the Panjab they consider themselves a sub-clan of the Panvar Rajput**, and are thus merged in the general mass of that order. In Kathiawad they preserve the tradition of migration from Bikaner and Multan, the latter being the very tract in which they were found by Alexander as a foreign nomadic body, successfully resisting the expeditions sent against them by neighboring Aryan potentates. It is conjectured,*

therefore, that these, too, are Scythic tribes connected with the rulers of Taxila at that period, and were driven into exile through Sindh into Kach by the Muslim invasions.

किताब - करहिया कौ रायसौ

लेखक - संकलन - उपेंद्रशरण शर्मा

पृष्ठ क्रमांक २८८

*फते पाय **धारा-धनी** भए इकट्ठे वीर ।*

देश जमायौ जुगत सो कर मसल्लत रण धीर ।। ५२ ।।|

नृपत बढ़ाई बहुत किय तुम अर्जुन के रूप |

शत्रुन को दाहन दहन धारे पहुमि सरूप ।। ५३।।

रामसिंह सिरोपाव दे कीनौ हुकुम समाज |

बसौ करहिया नगर में करे निकंटक राज ।। ४४ ।।

श्याम राव आदर कियौ । कीनी कृपा अपार ।

नगर बसायौ जुगति करि सवे देश सम्हार | ५५।।

चार वरण निज धर्म सो शोभा लही अपार |

*सुबस बसायौ नगर को करि इकठौ **परवार** ।। ५६ ।।*

किताब - Outlines of Indian History (year 1928 lahore)

लेखक - A Yusuf Ali

पृष्ठ क्रमांक ९७ -९८

Four Rajput clans born of fire (Agni-kulas). The bard Chand Bardai says of them that they were the greatest of the thirty-six royal races: the rest were born of woman, but these from fire. The story is that when the kings of the ancient warrior race be- came wicked they were exterminated by Parasu Rama, and the Brahmans became

supreme. But as the Brahmans could not fight, they soon felt the need of warriors to defend the sacred books. The gods met at Mount Abu (in Rajputana) and created a new race of warriors, the ***Powars,*** *the Parihars, the Chauhans, and the Solankis or Chalukyas. These were the fire-born tribes. This tradition confirms the historical break between the old Kshatriyas and the new Rajputs.*

Fire-born tribes.*---* ***The Powars have practically disappeared.*** *They are represented in history by the famous Raja Bhoja of Malwa (1018-1060). whose fame in the arts of peace and war still survives in Indian tradition*

(स्वयम को पोवार जाती के क्षत्रिय कहलाने वाले मध्य भारत के चार जिलो के अलावा राजपूताने में या अन्य कही भी नहीं मिलते ! ये लोग सन १७०० के बाद मुख्य धारा से दूर ही रहे इसलिए राष्ट्रीय स्तर पर ये लोग अन्यो के लिए अनभिज्ञ है ! पोवार कहलाने वाले लोग वास्तविकता में राजपूताने में न मिलने के कारण लेखक पोवार गायब होने की बात लिखते है ऐसा प्रतीत होता है)

किताब – Central Provinces District Gazetteers Nagpur District (year 1908)

लेखक – R V Russell ICS

पृष्ठ क्रमांक ३०८

There is a fort said to have been built by the Bhonsalas with brick wall resembling those of Chanda town and at the same distance is a large field known as the Juna Killah or Old fort . This was probably the site of fortress of the early kings . In the field large bricks are found like those at Mansar . Nagardhan is said to be the first place to which the Ponwar Rajpoots came after leaving Dhara , their original home in Malwa .

किताब – Die Erdkunde (year 1836)

लेखक – Carl Ritter

जर्मन भाषा में लिखित इस पुस्तक के पृष्ठ क्रमांक ७३४, ७६१ , १००३, १०२० पर मालवा के पोवारो का उल्लेख है !

किताब – बाळाजी बाजीराव : उत्तरहिंद १७४१-१७६१

लेखक – सम्पादक – गो .स. सरदेसाई

पृष्ठ क्रमांक – २३

पत्र क्रमांक – २६ दिनांक ०२.०४. १७५०

*..... त्यात सालबाईस मोर्चा लाविल्यावर त्यानी आपला भगीरथ प्रेन केला . **उदगाववाले पोवार** वैगरे फौज ठेवून , पलाच्यास येउन लागले . लस्करावर रात्रि आवाई करावी , प्रेनास न चुकले . त्याचे मोकासी त्यानी त्याचे साहित्ये केले . परन्तु पराभवास पावउन जागा घेतला . लोहगडास मोर्चे रा गोविंदराव सिवदेव व् पायेदल व् तोफ येसी ठेउन पलाच्यास येउन **पोवाराचे पारपत्य करावे** ह्या उद्देशे आलो .*

किताब – रासमाला द्वितीय खंड (हिंदी अनुवादित)

अनुवादक – श्री गोपाल नारायण बहुरा

पृष्ठ क्रमांक – १२, १३

पंवारो के नाम से कहावत का उल्लेख है !

ध्रुव चालै , मेरु डगै, उलट पड़े गिरनार

रण में पग पाछा धरै , क्यु कर वीर पँवार ?

यह कहावत पंवारो की वीरता व् शरणागत वत्सलता पर पड़ी है !
एक बार एक घायल तीतर पंवारो के बसाहट में आ जाता है ! उस तीतर के शिकार के उद्देश्य से चमाड सैनिक लोग वहा पहुचते है ! तीतर की मांग करते है पर पंवार उस तीतर को वापस करने से मना करते है क्योंकि वह तीतर उनके शरण में आया रहता है ! चमाड व् पंवारो में युध्द छिड जाता है ! पांच सौ चमाड सैनिक मारे जाते है और १४० पंवार मारे जाते है ! आखिर कार पंवारो की जीत होती है ! एक तीतर के लिए अपनी जान देने *वाले पंवारो पर कहावत बनना लाजमी है !*

पृष्ठ क्रमांक - १४
काठी सिंध के सुमरा राजा के आश्रित थे तथा पटावत थे और पावर देश में रहते थे !
किताब - राजस्थान रा दुहा (१९६१)
लेखक व् सम्पादक - नरोत्तमदास स्वामी
पृष्ठ क्रमांक - २७६ पर लेखक ने पुरानी घटना का उल्लेख किया है !

६-ज्यों पॅवार त्यों धार है-
इस पर ऐक कथा है कि धाराके ऐक पॅवार राजाने जेसळमेरके ऐक व्यापारीको पकड़कर उसका सब धन ले लिया । छूटनेपर वह जेसळमेरके राजा देवराजके दरबारमें जाकर पुकारा । देवराजने अपनी प्रजाके अपमानको अपना ही अपमान समझा और तुरंत प्रतिज्ञा की कि जबतक धाराको न जीत लूँगा, तबतक जल भी नही पिऊँगा।

धारा जेसलमेर से बहुत दूर थी और फिर जाते ही उसे जीत लेना भी असंभव था। तब तक बिना जल पिये रावळजी कैसे जीवित रहेंगे, यह सोचकर सारे सरदार चिंतित हुये । अंतमें एक उपाय सोचा गया कि मिट्टीकी धारानगरी बनाई जाय और राजा उसे ही जीत कर जलपान करें तथा बादमें धारापर आक्रमण करनेकी तय्यारी की जाय। समझाने पर रावळने यह सलाह मान ली। धाराका मिट्टीका दुर्ग बनाया गया और रावळके यहाँ रहनेवाले पॅवार सरदार उसकी रक्षाके लिये तय्यार हुये । रावळ सेनाके साथ दुर्गको ध्वस्त करनेके लिए आये तो पॅवार सरदार तेजसी और सारंगने सचमुचका युद्ध छेड़ दिया। लोगोने समझाया तो बोले कि धारा हमारी मातृभूमि है, उसका नाश हम नही देख सकते चाहे वह कृत्रिम ही क्यो न हो, जब तक एक भी पॅवार जीवित है तबतक रावळ इस दुर्गको विजय नही कर सकते- जहाँ धारा है वहाँ पंवार हैं और जहाँ पॅवार हैं वहाँ धारा है। अंतमें लड़ते हुये सारे पॅवार योद्धा मारे गये एवं उसके बाद ही रावळ उस नकली दुर्गको विध्वस्त कर सके। धन्य है इन वीरोंका अभूतपूर्व मातृभूमि-प्रेम !

किताब – The History of India from Remote Antiquity to the accession of the Mogul Dynasty (year 1836)

लेखक – John C Marshman

पृष्ठ क्रमांक - ५८

The era of Raja Vikramaditya follows the supposed expulsion of the Boodhists from India. As there are no fewer than eight monarchs to whom this name is applied, it is difficult to identify Vikrama. Every legend, however, agrees in making its Vikrama fall by the hands of a

powerful demon, Salivahun. As the king of this name who reigned at Oojein has given birth to an era, it is reasonable to fix on him as the original Vikramaditya, and to apply to him the description which Ferishta has drawn. ***Vikramaditya was of the Prumura tribe, the name of which has been shortened to Powar and Puar****. The notices of this race, though very indistinct, are sufficient to shew that they bore a wide sway in India, and had reigned at Uvunti, or Oojein, long before the age of Vikrama.*

पृष्ठ क्रमांक - ६१

About this time, a king of Oojein, who is called by the Greek historian, Porus, an evident corruption of Prumura, or Powar, and who is described as counting six hundred kings among his tributaries, sent an embassy to Augustus, the emperor of Rome. It is not a little singular that the letter sent to Europe by this descendant of Vikramaditya, was written in Greek. This fact proves the wide diffusion of the Greeks in India, either through the Bactrian kingdoms, or through maritime commerce.

शिवाजी महाराज इनके समकालीन कवी परमानंद द्वारा शिवभारत नामक ग्रन्थ की रचना की गयी ! उसमे में पवार / पोवार के बजाये प्रवार: शब्द का उपयोग करते है !

उदाहरण-

शिवभारतम अध्याय १० श्लोक ४३

सती शीलवती रम्य रूपा चातिगुणोंज्वला !
अभजद भूपति भार्या ***प्रवारकुल स****म्भवा !!*

अर्थात - सती शीलवती रम्यणीय रूपवती व् अत्यंत गुणवान ऐसी पवार कुल की भार्या (पत्नी सईबाई) उनको (शिवाजी को) प्राप्त हुयी !

शिवभारतम अध्याय २५ श्लोक ५१
दत्तरुस्तुम वर्माणौ राजानौ यादवान्वयौ
*सर्वजित्तनयो **रंभ: प्रवार:** परवीरहा !!*
अर्थात – दत्त व् रुस्तम हे जाधव , सर्वाजीचा पुत्र , शूरवीर रंभाजी पोवार

------------------------------------- ------------------------------

किताब - TREATIES, AGREEMENTS, AND ENGAGEMENTS, BETWEEN THE HONORABLE EAST INDIA COMPANY AND the Native Princes , Chiefs and States IN WESTERN INDIA ; THE RED SEA ; ITIE PERSIAN GULF ; &c. ALSO BETWEEN Their BRITANNIC MAJESTIES GOVERNMENT, AND COMPILED UNDER INSTRUCTIONS FROM THE GOVERNMENT-OF BOMBAY,
लेखक R. HUGHES THOMAS, Uncovenanted Assistant to the Chief Secretary.

पृष्ठ क्रमांक - १५

DHAR.
Treaty with the Raja of Dhar, dated the lOth January 1819.
Treaty between the Hon’ble the English East India Company and Ramckundru Rao Powar, Raja of Dhar, his heirs and successors, concluded on the part of the Hon’ble East India Company, by Brigadier General Sir John Malcolm, K. C. B. and K. L. S., Political Agent of the Most Noble the Governor General, and Bapoo Rughoonath, on the part of Ramchundru Rao Powar, Raja of Dhar; the said Brigadier General Sir John Malcolm being invested with full power and authority by the Most Noble Francis, Marquis of Hastings, K. G., one of his Britannic Majesty’s most Hon’ble Privy Council, appointed by the East India Company to direct and control

their affairs in the East Indies, and the said Bapoo Rughoonath being invested with like powers and authority from Ramchundru Rao Powar, Raja of Dhar.

पृष्ठ क्रमांक – १०८

DEWAS.

Treaty with the Raja, of Dewas, dated the Is# November 1818, and ratified by the Right Honorable the Governor General of India in Council on the 12th December 1818.

Engagement between tbe Hon’ble the East India Company and the Maharajas Tookojee Powar and Anund Rao Powar Joint Rajas of Dewas, their heirs and successors, settled by Lieutenant Alexander MacDonald, acting under authority from Brigadier General Sir John Malcolm, K. C. B. and K. L. S., Political Agent to the Most Noble the Governor General on the part of the Hon’ble the East India Company, and Sukharam Bapoo, on the part of the Maharajas Tookojee Powar and Anund Rao Powar, Joint Rajas of Dewas, tbe said Brigadier General Sir John Malcolm being invested with full powers and authority from the Most Noble Francis, Marquis of Hastings, K. G., one of His Majesty’s Most Hon’ble Privy Council, Governor General in Council, appointed by the Hon’ble Company to direct and control all the affairs in the East Indies ; and the said Sukharam Bapoo being duly invested with full powers on the part of Tookojee Powar, and Anund Rao Powar, Joint Rajas of Dewas.

किताब – Report on the census 1891 Volume II The caste of Marwar (Published Year 1894)

पृष्ठ क्रमांक - १२९

The Porwals

The Porwals are said to have been originally the Rajpoots of Patan in Gujrat , where they embraced Jainism some 700 years ago . The Rajpoot clans of Panwar , rathore and Solunkhi are still found among them .

———————————————————————————————

किताब - शिव चरित्र साहित्य १२ वा खंड (प्रकाशन १९६४)

लेखक व् सम्पादक - भारत इतिहास संशोधक मंडल पुणे .

इस पुस्तक में मराठा दफ्तरों के पत्र प्रस्तुत किये गए है ! पृष्ठ क्रमांक - ६४ /६५ पर सन १७१९ के पत्र में नेरोजी पोवार लिंगोजी पोवार आदि का नाम लिखा मिलता है ! मराठाओ शामिल पुराने परमारों को पोवार शब्द से सम्बोधित किया गया है !

किताब - History of Kanauj to Moslem Conquest (1937)

लेखक - Rama Shankar Tripathi

पृष्ठ क्रमांक - २२१

Who were the Pratiharas ?

There is a late legend in cand's Raso , which groups the Pariharas or Pratiharas along with the three other Rajpoot clans – The Cauhan (Cahamana), Powar (Paramara) and Solanki (Chalukya) – as Agnikula deriving their origin from a sacrificial fire pit (agnikunda) at Mount Abu .

किताब – The GUJJARS (A Book Series on History and Culture of Gujjar Tribe)
लेखक –Dr Javaid Rahi
J&K Academy of Art, Culture and Languages Srinagar/Jammu
पृष्ठ क्रमांक – 89

Entry into India
Some of these Saka tribes entered northwest India through the Khyber Pass, others through the more southerly Bolan Pass which opens into Dera Ismail Khan in Sindh an entry point into Gujarat and Rajasthan. From here some invading groups went north (Punjab), others went south (Maharasthra), and others further east (UP, MP). This explains why some Jat, Gujjar and Rajput clans claim descent from Rajasthan (Chauhan, <u>Powar,</u> Rathi, Sial etc.) while others from Afghanistan (e.g. Mann, Her, Bhullar, Gill, Bajwa, Sandhu, etc.). This is supported by the fact that the oldest Rajput geneologies (10th centuries) do not extend into the northwest's Gandharan Buddhist period (400 B.C.-900 AD).

किताब – ETHNOLOGY OF INDIA. (1859)

लेखक – E. G. LATHAM,

पृष्ठ क्रमांक – 297

The Khas fall into divisions, being Thapa, Bishnyat, Bhandari, Karki, Khanka, Adhikari, Bisht, Kunwar, Baniah, and the like. They fall, too, into sub-divisions, e. g. the
Bagyal , Gagliya, Takuryal, Suyal, Palami , Maharaji Liaminchanya, Rhulal, <u>Powar,</u> Sunyal, Ghimirya , Khapotari, Gudar, Parajuli
--

किताब – The Modern Traveller , a popular Description , Geographical , Historical and Topographical of the Various countries of the Globe , INDIA volume IV

पृष्ठ क्रमांक – 229-230

In the Indian Manuscripts , Sir John Malcolm says , it is noticed as a separate province 850 years before Christian Era , when Dunjee, a sovereign of the Bheel race , restored the power of Brahmins , which had been destroyed by the Buddhists . One of his successors about BC 730 is said have shaken off his dependence on the Hindoo Sovereign of Delhi . On the Failure of his line (about BC 460) Adut Puar , a Rajpoot prince commenced the Puar dynasty , which continued to rule Malwah upwards of 1058 years . Of this line was the famous Vikramaditya who established the era still in general use .

किताब – Early Hindu India ,a Dynastic Study Vol- III (1917)

लेखक – A K Mazumdar

पृष्ठ क्रमांक – 659

The Puranists probably call these Persians "Pallavas (Pehlvis). These Pallavas were perhaps some plundering tribes subject to Persian influence ; or they might have been sent by a Persian monarch for a regular attack.

The Persian Period in the Indian History, is still a forgotten chapter Cyrus (541—40 B. C.). Darius (512 B. C.) had close political connection with India. To defeat the persecuting Jains and the Jain Non Aryan Chiefs, the Hindu Rishis and Brahmins made new heroes at Mount Abu. These heroes are called Agni kula or Fire Dynasty. They were heroic, tall and fair : they were not true native of the soil. The Brahmins, even by their best efforts, could not reclaim them from their former manners, I think these new heroes ***were fire and sun-worshipping Persians*** *, so, called* ***Agnikula***

Fire—born dynasty. *Of the 4 lines sprung from the four heroes, the Pramara and Chauhan were most famed and powerful.*

किताब – Memoir on the delta of the Indus (1837)

लेखक – T G Charles

पृष्ठ क्रमांक – ६७३ – ६७६

वर्तमान पाकिस्तान के पोवार जागीरदारों व् जमींदारो के नाम लिखे है !

पृष्ठ क्रमांक – ६७७

*The Rhuids are considered the Head of the Belooch Tribes. These tribes first became powerful under YAR MAHOMED, Kulhora, whom they assisted in conquering the **Powar Tribe**, who then held dominion in Sind*

किताब – Gazetteer of Ajmer- Merwara (1926)

पृष्ठ क्रमांक – 72

83 (3) Thakur of Masuda – Meratia Rathore
Descended from Hanwant Singh , a scion of the house of Dudhaji son of Jodha , Raja of Marwar . **The Parganah of Masuda was given in Jagir to Hanvant Singh and his Brothers By the The Emperor Akbar on their expelling the Powar Rajpoots** . The Masuda estate is the richest in the district . Thakur Debi Singh of Masuda rendered Assistance to the British in their first subjugation of Mairwara in 1818-1819 .
84 (4) Raja of Pisangan – Jodha Rathore
…… Descended from Udai Singh , Raja of Marwar through Madho Singh , his fifth son , **Kesri Singh the son of the latter ejected the Powar Rajpoots from Pisangan and obtained grant in Jagir from the Emperor Shahajahan** . ……
85 (5) Rao of Junia – Jodha Rathore

Descended from Udai Singh , **Raja of Marwar when the one son of Kesri Singh expelled the Powars from Pisangan** . The ancesters of Kalyan Singh expelled the Gors from Junia

---

किताब - Annals of Antiquities of Rajasthan of the Central and Western Rajpoot states of India , Volume II में इतिहासकार लेखक जेम्स टॉड लिखते है ---

About a mile after we had commenced our March this morning , we observed the Township of Sontra on our right which is always conjoined to Dabi , to designate the tuppa of Dabi Sontra a Sub division of Loecha . Being informed by Scout that it contained inscriptions , I requested my Guru and one of my Brahmins to go there . The search afforded a new proof of Universality of the Pramar sway and of the conquests of another Lord of the world and the faith Alla-o-din the second Alexander. The Yati found several altars having inscriptions and many pallias from three of which placed in juxta position he copied the following inscriptions –

" Samvat 1422 (AD 1366) ***Pardi Teza and his son Deola Pardi*** *from the fear of shame for the Gods , Brahmins , their cattle and their wives sold their lives ."*

"Samvat 1446 (AD 1390) In the month of Asar (badi ekum) Monday in the castle of Sontra (Sutrawan Doorg) the Pramar Ooda Kula , Bhoona for their Kine , wives , Brahmins along with the Putra Chonda sold their existence"

यह शिलालेख प्रमार वंश के व्यक्तियों के लढते हुए प्राण त्यागने सबंधित है ! खास बात यह की इसमें **परमार तेजा पारदी** का नाम उल्लेखित है ! पारदी या पारधी यह कुल ३६ कुल पंवारो में आज भी है ! पारदी कुल प्राचीन पारद लोगो से सबंधित लगता है ! पर्शिया को प्राचीन समय के संस्कृत ग्रंथो में पारद कहा गया है !

Annals of Antiquities of Rajasthan of the Central and Western Rajpoot states of India , Volume II में इतिहासकार लेखक जेम्स टॉड लिखते है---

The Soda Tribe was paramount which together with the strong analogies in names of places and princes, affords a very reasonable ground for the conclusion we have come to that the Sodha Tribe of Puar Race was in possession of Upper Sindh, when the Macedonian passed down the stream.

किताब - Administrative Report Central Provinces 1882-83

पृष्ठ क्रमांक ४२

The Powar caste is chiefly found in Bhandara, Balaghat and Seoni,
पृष्ठ क्रमांक ४१

पोवारो की जनसंख्या - १०६०८६ बतायी गयी है !

किताब - The Imperial Gazetteer of of India , Vol XIII (1887)

लेखक - Sir William Wilson Hunter

पृष्ठ क्रमांक ११५ -

History.—The family of the chief of Sunth, Powar or Parmar by caste, claim to belong to the Mahipawat branch of the famous Malwa dynasty, which boasts of Vikram of Ujjain in the 1st century A.D., and of Bhoj of Dhar in the 11th century a.d. The dynasty was driven from Ujjain (it is stated in the 10th century a.d.) ; and according to the Sunth bards, Jhalam Singh, a Powar from Mount Abu, established his power at, and gave his name to, the town of Jhdlod in the Panch Mahal .There is a legend that the Emperor, hearing of the exceeding beauty of the daughter of Jhalam Singh, Rana of Jhalod (the fifth in succession from Jhalam Singh, the founder of the dynasty at Jhalod),demanded her in marriage ; and that on Jhalam Singh declining the alliance, he was attacked by the

Mughal army, and was defeated and killed. His son, Rana Sunth, fled for safety to the Sunth jungles, then under the sway of a Bhil chief called Sutta. In the year 1255, Sunth defeated Sutta, and took possession of his capital, called Brahmapuri. He changed its name to Sunth, and established his own dynasty.
According to another tradition, the Sunth family is said to have come from Dhar in Malwa, when that principality was conquered by the Muhammadans.

किताब – AN INQUIRY INTO THE ETHNOGRAPHY OF AFGHANISTAN, (1891)
लेखक - H W Bellew
इस किताब में अफगानिस्थान के मूलतः परमार या पंवार वंश के निम्नलिखित लोगो (जो अब मुस्लिम धर्म अपना चुके है) का ब्यौरा दिया है -
Bibi / bidu / Babi/ Balbo , Khyri / Khyrbun/ Khyro , baba , Bahlol , Kati **, <u>Puaro ,</u>** Ponwar , kabi / kaba , khajal / Khidar/ Khizar/ Khozar / Kajir / Khajuri , Japar , Sagra / Sokri / Saghri / Sarga , Bhiba or Bubak or Bibo , Sampal , Umra , Puni /Panni /Panya , , Samra / Samar , Pahar , Rehar , Kalesar , Bargwet ,Devi / Dewa , Par, Dand , Maro / Meri , Surat , Bapaj , Sadan , Taik , Ormur, Kalpar , Horaiya kalmati

----

किताब – Asiatic Researches or Transactions of the Society Vol III Year 1799
पृष्ठ क्रमांक –१०६ , ११८
धार के मराठा पवार सरदार को पोवार सम्बोधित किया गया है ! अंग्रेज ही नही बल्कि मराठो की बखरो में भी पोवार संबोधित किया मिलता है !

किताब - History of British India from 1805 to 1835, Vol II (1746)

लेखक - Horace Hayman Wilson

पृष्ठ क्रमांक -४०८

West of the territories of Holkar, extending towards Guzerat, are situated the two small states of Dhar and Dewas, the governments of kindred chiefs. Their ancestors were Rajputs of the Powar tribe, but they had migrated at an early period to the south, and had become naturalised as Mahrattas. Included among the Peshwa's officers, they obtained assignments of land and tributes in Malwa upon the Mahratta conquest; and, although their possessions had been reduced to extreme insignificance by dissensions among themselves, and the encroachments of Sindhia, Holkar, and the other more powerful Mahratta leaders, they still retained a portion of their patrimony, and a place among the Mahratta princes of Malwa. Upon the advance of the British armies, they applied to be taken under protection, and, as part of the plan of effecting a settlement of Malwa, the application was, after some investigation, complied with. Allegiance, with military service on the one hand, and protection on the other, were the main conditions of the contracts

----

किताब - कालिदास ग्रंथावली

लेखक - पंडित श्रीराम तेज शास्त्री

पृष्ठ क्रमांक - ६९० व् ६९१

उज्जयिनी के शासक का व्यक्तिगत नाम 'विक्रमादित्य' था। उनका विरुद 'विक्रम शील 'साहसांक' तथा 'शकारि' था । उनके परवर्ती अन्य गुप्त राजाओं ने विक्रमादित्य की उपाधि धारण की थी, यह उनका व्यक्तिगत नाम नहीं था। हमें यूरोपीय इतिहास में भी समानान्तर दृष्टान्त प्राप्त होते हैं। देखें-प्रारम्भ के सीजर, एलेग्जेण्डर आदि नाम परवर्ती राजाओं द्वारा उपाधि के रूप में ग्रहण किये जाते रहे हैं। गुप्तों तथा अन्य परवर्ती भारतीय राजाओं के आदर्श मालवगणतन्त्र

नायक 'विक्रमादित्य' हो थे, जो प्रथम शती ई० पूर्व में विद्यमान थे। कुछ अन्य तथ्य इस प्रकार है

*१. भारतीय परम्परा चन्द्रगुप्त द्वितीय को कालिदास का आश्रयदाता मानने के पक्ष में नहीं है। २. 'गुणाढय की 'वृहत्कथा' पर आधारित 'सोमदेव' कृत 'कथासरित्सागर' में उज्जयिनी के निवासी **परमारवंशीय महाराजा विक्रमादित्य** का वर्णन मिलता है। विदेशियो को हटाकर 'मालवगणस्थिति' नामक एक नवीन संवत् को प्रवर्तित करने वाले इसी परमशैव सम्राट् ने वैदिक धर्म का पुनः प्रचार-प्रसार तथा महाकालेश्वर मन्दिर का निर्माण करवाया। ३. कालिदास रचित 'विक्रमोर्वशीयम्' नाटक में विक्रमादित्य एवं उनके पिता महेन्द्रादित्य इन दोनों का नाम प्रकारान्तर से मिलता है। ४. हाल (ई० पूर्व प्रथम शताब्दी) द्वारा प्रणीत 'गाथासप्तशती' ग्रन्थ में विक्रम का उल्लेख हुमा है। **विक्रमादित्य परमारवंशीय होने के साथ ही साथ सूर्यवंशीय भी थे,** कालिदास ने 'रघुवंश' में सूर्यवंश का वर्णन किया है। ५. सम्राट् विक्रमादित्य तथा उनके सभारत्न महाकवि कालिदास दोनों ही परमशैव थे। ६. महाकवि कालिदास कृत 'अभिज्ञानशाकुन्तल' में आया हुआ 'पशुमारण' शब्द इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि कालिदास उस काल में विद्यमान थे, जब कि समाज में यज्ञकर्मों की प्रधानत्ता थी। उक्त नाटक के अन्तिम भरतवाक्य में प्रयुक्त 'गणशतपरिवर्तरेवमन्योन्यकृत्यैः' यह पद्यांश -इस वात को प्रमाणित करता है कि महाकवि के समय में गणराज्यों की प्रधानता थी। गणराज्य ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी में विद्यमान थे, बाद में नहीं। ७. ईसा की प्रथम शती में रचित अश्वघोष की कृति महाकवि कालिदास के काव्यों से प्रभावित है। ८. महाकवि कालिदास के काव्यों में कुछ ऐसे पदों के प्रयोग देखें जाते है, जो अतिप्राचीन है, ऐसे प्रयोग वेदों में भी पाये जाते हैं।*

किताब – Central Province District Gazetteers Bhandara District Volume A

लेखक – R V Russell

पृष्ठ क्रमांक – 212

***Mahagaon Zamindari**. This estate is situated in the south of the Säkoli tahsil bordering the Chanda District. Its area is 31 square miles. The founder of the family was a Ponwar Rajput who came from Mälwä and rose to the post of leader of 2000 horse in the service of the Gond Rājā Bakht Buland (1700 A.D.). He was given a grant of land for suppressing a recalcitrant zamindär in Tirora, and the family is said subsequently to have held Länji, which was surrendered to the Bhonsla Government in exchange for Mahagaon.*

____

किताब – महाराष्ट्रीय ज्ञानकोश विभाग बारावा (१९२५)

लेखक – श्री व्यंकटेश केतकर

पृष्ठ क्रमांक – २२२

गोंदिया --- ..... मालगुजार पोवार रजपूत आहे

गोंदिया में बिसेन परिवार की मालगुजारी थी जो की पोवार समुदाय के है !

ग्रन्थ – श्री वाल्मीकि रामायणम

लेखक - वाल्मीकि

अध्याय – बालकाण्ड ५४ वा सर्ग

तस्य तद् वचनं श्रुत्वा सुरभिः सासृजत् तदा ।

तस्या हुँभारवोत्सृष्टा: पह्लवा: शतशो नृप ॥ १८॥

अर्थात --

'राजकुमार | उनका वह आदेश सुनकर उस गौ ने उस समय वैसा ही किया | उसके हुंकार करते ही सैकड़ों पह्लव जातिके वीर पैदा हो गये ॥ १८ ॥

किताब – STUDIES IN RAJPUT HISTORY VOL. I. ORIGIN OF THE CHALUKYAS (1937)

लेखक – RANJIT SING SATYASRAY

पृष्ठ क्रमांक – ७२

To a Hindu, there is no difference between Brahmana Kula and Agni Kula. The seven great Rishis, the earliest of mankind, according to mythology were born of fire. We have descriptions of Agnivamsa in the Puranas The term Agni-Kula may therefore denote a Brahmanic origin. Of the four Agnikulas, at least three have epigraphic evidences to show their Brahmanic origin. It is quite probable that their Brahmana ancestors took to arms like the Kadamba Mayura Sarma for some reason or other. The traditional meanings attributed to the terms like Chalukya and Chauhan in the Agnikula story point to their taking up arms. Indeed the Chalukyas are described as having risen out of fire with the Vedas in one hand, a sword in the other and a sacred thread round the neck.

पृष्ठ क्रमांक – १२

It may be worth noting that the legend is not found introduced in the nearly contemporaneous Bhinmal inscription, dated 1060 A.D. (Bombay Gazetteer, vol. i, pt. 1, p. 472; E.I., v, App., No. 689), of the Rajputana line of Parmars. This inscription (like those of the Chohans) speaks simply of the "Paramara race" without the least suggestion of any miraculous occurrence. It would seem, therefore, that the legend of the 'fire-birth' was limited to the royal Parmar line of Malwa. What is curious, however, is the fact that there exist several Parmar inscriptions of earlier date than 1080 A.D. which make no mention whatever of that legend. This circumstance might be thought to prove that the legend was not known before 1080 A.D., or the later half of the eleventh century, if it were not that we have also inscriptions later than 1080 A.D. which do not mention the legend such are the charters (land-grants) of Lakshmi Varma. Deva,

dated 1143 A.D. (Ind Ant., xix, 353; E.I., v, App., No. 121), and of Arjuna Varma Deva, dated 1211 A.D. (J.A.S.B. v, 378; E.I., v, App., No. 195). The evidence of the charters, therefore, does not necessarily disprove an existence of the legend earlier than the latter half of the eleventh century, but it does prove that no credence, or at least no importance, was attached to it officially. It might be introduced into private, or semi-private eulogies (prasasti), but not into official charters (Sasana) Nava Sahasanka Charita of Padma- Gupta also tells the same story (Canto XI, VV. 64-76), and the poem was composed before any of these grants during the last quarter of the tenth century. Probably it was adopted from this poem.

पृष्ठ क्रमांक – १५

There are descriptions of Agni- vansa in the Puranas (e.g., Matsya Purana, Ch. 51) where it is stated that Agni, son of Brahma had three sons, Pavaka, Pavamana, and Suchi. All the ancient Brahmana and Ksatriya families traced themselves from a mythological ancestor. We do not know whether the ancient Paramars traced themselves from Pavaka or Pavamana. But the story in their inscriptions and poem is evidently derived from the Ramayana.

किताब – Haryana District Gazetteer - Rohtak (1970)

लेखक – Haryana Gazetteers Organization Revenue Department

पृष्ठ क्रमांक २२९

Maham (tehsil Gohana)

The town is situated in 28° 58' north latitude and 76 18 east longitude. 20 miles west of Rohtak on Rohtak-Hissar road. According to the census of 1961, it had a population of 9,300.

Tradition assigns the settlement of the town to the Mahabharata period when it was the site of a big fort. Later, it is said to have been re-founded by ***Rai Ballu, a Powar Rajput****, before the reign of*

Prithviraja Chauhan. It is said to have been destroyed by Muhammad Ghuri. But this place of antiquity is not historically recorded before the reign of Akbar when he gave it in jagir to Shahbaz Khan, an Afghan. The place flourished under the Afghans until it was snatched away by the Rajputs under Durga Dass in the reign of Aurangzeb.

किताब – Rediscovering India , Abode of Gods Uttarakhand Vol 37(1984)

लेखक – Shah G

पृष्ठ क्रमांक ७२

The Garwal Kings were great Builders of places and patronized fine arts . Maularam lived in the court of ***Pauwar kings at Srinagar*** *.*

किताब - परवार जैन समाज का इतिहास (१९९२)

लेखक – सिध्दान्ताचार्य पं. फूलचंद्र शास्त्री

पृष्ठ क्रमांक २५

(१) प्राग्वाट या पोरवाड़ का संगठन जिन कुलों को मिलाकर किया है, उसमें परमार क्षत्रियों का प्रमुख स्थान था।

(२) प्राचीन पट्टावलियों में आचार्य गुप्तिगुप्त को 'परमार' या 'प्रमार' अन्वय का लिखा गया है। जयपुर और उज्जैन की पट्टावलियों में स्पष्टतः 'परवार' लिखा गया है। एक पट्टावली में 'पंवारो राजपूत' लिखा है।

(३) सूरिपुर पट्टावली में आचार्य गुप्तिगुप्त के द्वारा एक हजार कुटुम्बों की स्थापना का उल्लेख है।

लेखक द्वारा निकाले गये इन तथ्यों के आधार पर भी यह स्पष्ट प्रमाणित है कि 'परवार' प्राचीन 'परमार' क्षत्रियों के वंशज है और उन्होंने अपने दि० जैनधर्म की

रक्षा के लिए ही अपनी पहिचान अनेक शिलालेखों में जातिवाचक नाम न देकर अपने नाम के साथ अपने मूलसंघ का पौरपट्ट के रूप में उल्लेख किया है।
जिस प्रकार उन्होंने परमारों के भेद-प्रभेदों में अपनी पहिचान बताने के लिए अपने को पौरपट्ट शब्द से अभिहित किया है।

पृष्ठ क्रमांक १७
मूलसंघ आम्नाय की पट्टावली से यह स्पष्ट हो जाता है कि विक्रम संवत् २६ में गुप्तिगुप्त नामक आचार्य मूलसंघ के पट्ट पर थे' जो परवार अन्वय के थे। आचार्य गुप्तिगुप्त विक्रमदेव के पौत्र थे। यह भी उल्लेख मिलता है कि परमार वंशभूषण महाराजा विक्रमादित्य के पोते गुप्तिगुप्त आचार्य अपने युग में अनेक मुकुटबद्ध राजाओं द्वारा प्रशंसित तथा बद्धानीक थे।......
...... सन् १९२६ के "दिगम्बर जैन" के विशेषांक में प्रकाशित ईडर की पट्टावली में आचार्य गुप्तिगुप्त को परवार जातीय तथा विक्रमादित्य का पौत्र लिखा है। एक अन्य पट्टावली में भी भट्टारक मुनीन्द्रकीर्ति ने उन्हें परवार जाति का बतलाया है। वटेश्वर की पट्टावली में भी इस बात का उल्लेख है कि गुप्तिगुप्त आचार्य मूलसंघ के आदि पुरूष थे और उनकी जाति परवार थी। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि महाराजा विक्रमादित्य परमार क्षत्रिय थे और उनकी ही संतान परवार कहे जा सकते हैं, जो पौरपाट (मूलसंघ) के अनुयायो थे। "परवार बन्धु " पत्र में प्रकाशित कई लेखों से यह निश्चित हो जाता है कि परवार "परमार" क्षत्रिय है और मूलसंघ आम्नाय के है।" ......
पृष्ठ क्रमांक २३
यदि शब्द विकास की दृष्टी से विचार किया जाये तो प्रमार से परवार शब्द विकसित हुआ है ! जो इस प्रकार है - प्रमार - परमार -परवार - पंवार ! यह भाषा विकास की एक कड़ी मात्र है !

पृष्ठ क्रमांक ३४

पौरपट्ट' परवार ही है इसका प्रथम प्रमाण हमे ब्रह्मगुलाल की रचना में उपलब्ध होता है। उनके ही शब्दों मे

***जहाँ पौरपट्ट सुखदाई, परवार वंश** सोई आई।*

बहुरिया मूर तहाँ साई, बनि मथुरामल्ल पिताई ॥

जगत्किर्ति पद उधरन त्रिभुवनकीर्ति मुनिराई ।

नरेन्द्रकीर्ति तिस पट्ट भये गुलाल ब्रह्म गुन गाई ॥

पृष्ठ क्रमांक १५४

प्राचीन पट्टावलियो में आचार्य श्री गुप्तिगुप्त को किसी में परमार , किसी में परवार , किसी में पवार और अन्य में पवारी राजपूत शब्दों से उल्लेख किया गया है !--- पं जगन्मोहनलाल शास्त्री

_____________--

किताब - The Gazette of India (July 23 1870)

लेखक – British Government

पृष्ठ क्रमांक 3

3rd Gorkha The Kemaoon Regiment
Havildar Bijairam Powar to be Jamdar
इसका मतलब गोरखा रेजिमेंट में भी पोवार वंशीय थे !

-

किताब - Asiatick Reseraches or transcations of the Society Instituted in Bengal (1792) Third Volume

इस अंग्रेजी किताब में पानीपत के युद्ध का विवरण है !

पृष्ठ क्रमांक १०६ / ११८ / १२९ में जसवंत राव पोवार इनका नाम लिखा मिलता है ! जसवंत राव पोवार धार के मराठा सरदार थे जिनके पूर्वज बिजौलिया के

पोवार थे और शहाजी महाराज के जमाने में पश्चिम महाराष्ट्र में स्थानांतरित हुए थे !

मराठी में लिखित पानीपत की बखरो में अनेक पोवारो का नाम लिखा मिलता है!

किताब - ऋग्वेद संहिता भाग २ मंडल ३, ४, ५ ,६

लेखक - आचार्य श्रीराम शर्मा

पृष्ठ क्रमांक परिशिष्ट १ ऋषियों का संक्षिप्त इतिहास

३६) पौर आत्रेय (५.७३-७४)—*वैदिक ऋषियों में पौर आत्रेय भी प्रतिष्ठित ऋषि है! पौर अर्थात पुरु का वंशज ! ऋग्वेद ८.३.१२ में देवराज इन्द्र के द्वारा सहायता पाने वाले एक पूरु राजा का नाम 'पौर' वर्णित है। सिकन्दर का विरोध करने वाले पौरस को इसी पौरवंश का प्रतिनिधि माना जाता है। ओल्डेनबर्ग ने ऋग्वेद ५७४.४ में इसी तथ्य को स्वीकार किया है। इनके नाम के साथ आत्रेय पद संयुक्त होने से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि या तो ये अत्रि ऋषि के वंशज होंगे अथवा ऋग्वेद पंचम मण्डल के प्रमुख ऋषि अत्रि होने के कारण इन्हें आत्रेय विशेषण से विभूषित किया गया होगा।*

(दूसरी ओर पश्चिमी इतिहासकार पौरस को पोवार लिखते है ! पौरस पौर थे तो पोवार यानि प्राचीन पौर हुए)

किताब - Gentleman’s Magazine and Historical Chronicle 1826 Voume XCVI , January to June

लेखक - Sylvanus Urban

पृष्ठ क्रमांक - 25

Revolt of Assyria - 750 BC

……

Accession of Puar I cir - 383 BC

Puar II (Porus) defeated by Alexander 327 BC

Accession of Chandragupta Sandracottus – 316 BC

किताब - The Taymouth Castle Manuscript of Sir Gilbert Hays " Buik of King Alxander the Conquerour" (Berlin 1898)
लेखक - Albert Herrman PHD

पृष्ठ क्रमांक १६

When on the point of starting for the residence of Candace,who has invited him to visit her, A. receives from King Porus a letter which begins as follows
(fol. 125 b):
Porrus, King of ynde to paradise,
Quliilk ouer all kingis of vourschep beris the price.

किताब – वायुपुराण

अनुषंग पाद समाप्ति

आत्रनुवंशश्लोकोऽयं गीतो विप्रै: पुराविदै: ।
<u>ब्रह्मक्षत्रस्य</u> यो योनिर्वंशो देवर्षित्कृतः ॥
क्षेमकं प्राप्य राजानं संस्थां प्राप्स्यति वं कलौ ।
इत्येष <u>पौरवो वंशो</u> यथावदनुकीर्तितः ।।।

----- अध्याय ९९ वायु पुराण श्लोक २७८-२७९

अर्थात

यहाँ पर पुरावेत्ता विप्रो के द्वारा अनुवांशिकता (वंशावली) के लिए यह श्लोक गाया गया है ! जो वंश ब्राह्मणों एवं क्षत्रियों का उत्पत्ति-स्थान था, जिस वंश का देवता तथा ऋषिगण सत्कार करते थे ! यह पूर्वजो का राजवंश है ! यह वंश कलियुग में भी राज्य प्राप्त करेगा ! उस पौरव वंश का वर्णन यहाँ किया गया है !

देवापिः पौरवो राजा इक्ष्वाकोश्चेव यो मतः ।
महायोगबलोपेतः कलापग्राममास्थित्तः ।।२९६ ॥

अर्थात

देवापि पौरव राजा था जो इक्ष्वाकु का वंशज माना गया है । वह महान् योग बलसे युक्त और कलाप ग्राम में आस्थित था !

किताब - उत्तरी भारत का इतिहास

लेखक - प्रो. हेतसिंह बघेला , अपर निदेशक प्राथमिक व् माध्यमिक शिक्षा राजस्थान सरकार

पृष्ठ क्रमांक - 33

श्री आसोपा का मत है कि वशिष्ठ गण आग्नेय या अग्निरस थे जो पुराणों के अनुसार अग्नि पुत्र कहे गए हैं। **'पवार ' भौगोलिक नाम है जो इस प्रदेश में रहने वाली सभी जातियों में प्रचलित है। अतः परमार भौगोलिक दृष्टि से पुरुरई या पवार थे।** इनमें से वशिष्ठ गोत्री ब्राह्मणों ने परमार्थ प्राप्त कर राजा का पद प्राप्त किया और उनके वंशज राजपूतों के 36 वंशों में सम्मिलित कर लिए गए।

किताब - हिन्दू भारत का उत्कर्ष अर्थात राजपूतो का प्रारम्भिक इतिहास

लेखक - भगवान दास

पृष्ठ क्रमांक - ७३

एक शिलालेखमें परमारोंको 'ब्रह्मक्षत्रकुलीन कहा है। हमारी समझमें इसका यही अर्थ हे कि जिन क्षत्रिय वंशोंके पूर्वज मन्त्रकृत् थे, उन वंशोंमेंसे यह एक वंश है। लोगोंकी धारणा है कि परमार वासिष्ट हैं ओर उनका जन्म वसिष्ठसे ही हुआ है। इसीसे वे **'ब्रह्मोपेतक्षत्रेण कुलीनाः'** हैं।

पंवार समुदाय के श्री लखाराम, रेव्हन्यू इन्सपेक्टर ढोंढीवाडा इनके द्वारा सन १८९२ में लिखित पंवार धर्मोपदेश नामक किताब में लिखित एक काव्य का उल्लेख प्राप्त हुआ है जिसमे वे मध्यभारतीय ३६ कुल पंवारो का उल्लेख करते है-

गौतम राउत पारधी, बीसन है धनवान।
ठाकुर पटल्या चौधरी, राना डाला चौहान।।
पुन्ड बघेला बोपच्या, कटरा सेंड्या जान।
रहमत हनवत टेम्भरया, क्षीरसागर पहिचान ।।
अम्बुलिया, कोल्ह्या, साहरया परहार।
भैरों भोयर भगत तुरूश, येडा जैयतवार।।
रंजाहड, रंढीवा कहूं, **फरीद रिन्हायत** मान।
राहंगडाला सरनागत, सोनवान्या शान ।।
हरिनखेडिया जान लो, **छतीस कुरी** बखान।
लखाराम ऐसी कहें, राखो इनसे ध्यान।।
निज जातिन की कुरी सबे निकसी **छतिसि धाम** ।
जो इनसे ज्यादा कहे, सो लिखे अपनो नाम।।

किताब - महाराष्ट्रीय ज्ञान कोष वॉल्यूम ३ (१९२३)
लेखक - श्री व्यंकटेश केतकर

पृष्ठ क्रमांक ४
पुरु हे समाजाचे नाव *असून त्यापैकी पुरुकुत्स व् त्रसदस्यु हे राजे होते .*

पृष्ठ क्रमांक ८

दाशराज्ञ युध्दामध्ये पुरु , यदु , तुर्वश , अनु, , द्रह्यु इत्यादि राष्ट्रे आपले स्वतंत्र अस्तित्व दाखवितात .

पृष्ठ क्रमांक ६७

पुरु- पुरुकुत्स (पुरूंचा राजा), पुरुकुत्सानी (पुरु कुत्साची बायको), दुर्गह (पुरुकुत्साचा बाप), इक्ष्वाकु (पुरु कुत्साचें कुल)......

पृष्ठ क्रमांक ७८

पौरः- (८. ३, १२). पुरुवंशज, आयु व रुशम, यांच्यासह उल्लेख, मेध्यातिथि म्हणतो, 'ज्या रक्षणसामर्थ्यानें रुम, रुशम व पौर यांचें रक्षण केलेंस त्या सामर्थ्यानें माझें रक्षण कर.'

पृष्ठ क्रमांक १४३

पुरूंचा जय झाला, *असें वर्णन करणाऱ्या अनके ऋचा आपणांस उपलब्ध होतात (१. १३१, ४; १. १७४, २; ४. २१, १०५ ६. २०, १०). कांहीं स्थळीं पुरूंच्या सामर्थ्याचा इतका महिमा गाइला आहे की इतर भक्तांनी पुरूंच्या सामर्थ्या- सारखें सामर्थ्य देवतांपाशीं मागितलें आहे*

पुरूंचे जय ज्या लोकांवर होत असत ते काळ्या रंगाचे होते चें एतद्विषयक उल्लेख खालील प्रमाणें आहे -

त्वद् भिया विश आयन्नसिक्नी रसमनाजहतीर्भोजनानि ।
वैश्वानर पूरवे शौशुचानः पुरो यद्ग्ने दरयन्नदीदेः ।। (७.५, ३).

जेव्हां हे वैश्वानर अग्ने, पुरुकरितां प्रकाशून तूं त्यांचे किल्ले पेटविलेस आणि भग्न केलेस तेव्हां तुझ्या भीतीनें दूर पळालेले काळे लोक संपत्ति टाकून पुढें धांवले.

यावरून काळ्या लोकांविरुद्ध लढणारा ***पुरु हा गौरवर्ण असावा.*** *हे काळे लोक बहुधा हिंदुस्थानांतील मूळ रहिवाशी असावेत असें कांहींचें मत आहे ! हे दाशराज्ञ युद्धांतील सुदासाचे प्रतिस्पर्धी होते असें दिसतें.*

पुरूंपैकी मोठमोठे राजे पुरुकुत्स, त्रसदस्यु वगैरे होत. यांचाच पुरु ह्या नांवानें उल्लेख येणे संभवनीय आहे. ***पुरु हे व्यक्तीचें नांव नसावें. तें एका जातीचें किंवा समाजाचें नांव असून संस्कृत वांगमयातील नेहमींच्या पध्दतीप्रमाणें त्या जातींतील किंवा समाजांतील मुख्याचें किंवा मुख्य व्यक्तीचें तें नांव बनलें असावें.*** *त्याप्रमाणें दोनहि प्रकारानें या शब्दाचा उल्लेख आला आहे.* ***<u>यांचें राहण्याचे ठिकाण सरस्वतीच्या कांठीं</u>*** *होतें असे स्पष्ट उल्लेख आहेत. (७.९६, २).*

पृष्ठ क्रमांक १४४

पुरु व इक्ष्वाकु एकच काय -

शतपथ ब्राह्मणांत पुरुकुत्साला ऐक्ष्वाक असें म्हटलें आहे. इक्ष्वाकु हे नांव फक्त एकदांच ऋग्वेदांत आले आहे. तथापि त्या शब्दावरून राजा असा अर्थवोध होतो. ज्याचें नांव असमाति-सूक्तांत आहे त्याला इक्ष्वाकुवंशीय असें समजतात. अथर्ववेदांत हि इक्ष्वाकूचा फक्त एकदांच उल्लेख आला आहे. परंतु तेथेंहि मूळपुरुष की वंशज ही शंका पुनः कायम राहतेच. ***पुरुकुत्स हा ऐक्ष्वाक होता असें शतपथ ब्राह्मणांत म्हटले आहे.*** *यावरून त्रसदस्यु हा इक्ष्वाकु होता ही गोष्ट प्रचारांत आली आहे. यावरून* ***पुरूंनांच पुढे इक्ष्वाकू म्हणू लागले असें होतें.*** *झिमर म्हणतो कीं, त्यांची वस्ति उत्तर सिन्धूकडे असावी परंतु याबद्दल निश्चित सांगतां येत नाहीं. त्यांची पूर्वेकडे वस्ति असण्याचा विशेष संभव आहे. इक्ष्वाकू यांचा अयोध्येशी संबंध पुढे आला.*

किताब - पतंजली कालीन भारत
लेखक - डॉ प्रभुदयाल अग्निहोत्री
पृष्ठ क्रमांक - ९७

पुरु-पुरु देश के राजा को भाष्यकार ने पौरव कहा है।' *पुरुओ का सर्वप्रथम उल्लेख ऋग्वेद मे मिलता है।' वाद मे, इनकी परम्परा विस्मृत-सी हो गई और फिर महाभारत मे ययाति और शर्मिष्ठा के पुत्र के रूप मे पुरु के दर्शन होते है।* ***प्राचीन पुरु सिन्धु के पश्चिम मे रहते थे, किन्तु बाद मे वे सरस्वती नदी के चारो ओर प्राच्य देश मे भी मिलते है।*** *ओल्डेनवर्ग के अनुसार पुरु लोग आगे चलकर कुरु लोगो मे सम्मिलित हो गये, जिस प्रकार तुर्वस और क्रिवि लोग पचालो मे विलीन हो गये थे, इसीलिए वैदिक काल के वाद उनका पृथक् पता नहीं चलता। ऋग्वेद में पुरुओ को जिस सरस्वती के किनारे बताया गया है; वह जिमर के मत से सिन्धु ही है।"*

शतपथ ब्राह्मण ४ (अध्याय ५)

एते ऽ एव पूर्वे ऽ अहनी । विश्वजिदतिरात्रस्तेन ह ***पुरुकुत्सो*** *दोर्ग्रहेणेजऽ**ऐक्ष्वाको** राजा तस्मादेतदृषिणाऽभ्यनूक्तमस्माकमत्र पितरस्त आसन्त्सप्त ऋषयो दौर्ग्रहेण वध्यमान इति ॥५॥*

अर्थात

इन्हीं पहले दो दिन के यज्ञो और विश्वजित अतिरात्र से पुरुकुत्स ऐक्ष्वाकु ने दौर्ग्रह अर्थात् अश्वमेध किया था । इसीलिए ऋ० Fo

४।४२।५ में मंत्र है-अस्माकमत्र पितरस्त आसन्त्सप्त ऋषयो दोर्गहे वध्यमाने !!५!!

ग्रन्थ – महाभारत

जयद्रथवध पर्व

*ये च सौवीरका योधास्तथा **सैन्धव पौरवा:** ।। २८ ।।*
उदीच्या दाक्षिणात्याश्च ये चान्येऽपि महारथा: ।
ये च कर्णमुखा राजन् रथोदारा: प्रकीर्तिता: ।। २९ ।।
एतेऽर्जुनस्य क्रुद्धस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ।

'राजन्! जो सौवीर, सिन्धु तथा पुरुदेशके योद्धा हैं, जो उत्तर और दक्षिणके निवासी एवं अन्य महारथी हैं तथा जो कर्ण आदि श्रेष्ठ रथी बताये गये हैं वे कुपित हुए अर्जुनकी सोलहवीं कलाके बराबर भी नहीं हैं ।।

महाभारत के इस श्लोक से समझ आता है की सिन्धु व पुरु देश के योध्धाओ को सैन्धव व क्रमशः पौरवा कहा है ! यानि 'व' या 'वा' विशेषण शब्द के अंत में लगा है ! पौरो को भारत में पौरव कहा गया है !
महाभारत काल के पहले पुरु जाती की जो शाखा भारत में प्रस्थापित हुयी थी वह शाखा पौरव कहलायी ! हालाकी सरस्वती प्रदेश में वे पौर ही कहलाते थे !
महाभारत कथा में दुष्यंत , सम्राट भरत (जिनके नामसे देश का नाम भारत पड़ा) आदि का पौरव वंश वास्तविक रूप से भीष्म के साथ ही समाप्त हो जाता है क्योंकि वे अविवाहित रहते है !

धृतराष्ट्र , पांडू , विदुर आदि महर्षि वेद व्यास के वंशज थे इसलिए उनको पौरव नहीं कहा जा सकता ! वेद व्यास पराशर ऋषि के पुत्र थे !

ग्रन्थ - विष्णु पुराण

देवापि: **पौरवो** राजा **पुरुश्चे**क्ष्वाकुवंशज: ।
महायोगबलोपेतौ कलापग्रामसंश्रितो।। ११८
कृते युगे त्विहागम्य क्षत्रप्रवर्त्तको हि तौ।
भविष्यतो मनोर्वंशबीजभूतौ व्यवस्थितो।। ११९
एतेन क्रमयोगेन मनुपुत्रैर्वसुन्धरा।
कृतत्रेताद्वापराणि युगानि त्रीणि भुज्यते।। १२०
कलो ते बीजभूता वै केचित्तिष्ठन्ति वै मुने।
यथेव **देवापिपुरू** साम्प्रतं समधिष्ठितौ।। १२१

पुरुवंशीय राजा देवापि तथा इक्ष्वाकुकुलोत्पन्न राजा पुरु-ये दोनों अत्यन्त योगबलसम्पन्न हैं और कलापग्राममें रहते हैं।। ११८।। सत्ययुगका आरम्भ होनेपर ये पुनः मर्त्यलोकमें आकर क्षत्रिय-कुलके प्रवर्त्तक होंगे। वे आगामी मनुवंशके बीजरूप हैं।। ११९।। सत्ययुग, त्रेता और द्वापर इन तीनों युगोंमें इसी क्रमसे मनुपुत्र पृथिवीका भोग करते हैं।।१२०।। **फिर कलियुगमें उन्हींमेंसे कोई-कोई आगामी मनुसन्तानके बीजरूपसे स्थित रहते हैं जिस प्रकार कि आजकल देवापि और पुरु हैं।।१२१।।**

--

किताब -**The Ancient History of India, Vedic Period: A New Interpretation**

लेखक **- K. C. Singhal, Roshan Gupta**

पृष्ठ क्रमांक = ७ व ८

Now, 'Puru' has been interpreted by Sayaṉa in the sense of 'many'. But 'Puru' is a proper noun too. There were three or four Purus in the Rgvedic period. One of them is Pururavas, the son of Ila. The other was a son of Yayāti and the third was a Pani, who was killed by Indra." Purukutsa was also sometimes called 'Puru'.

*But the following mantra leads us to the discovery of **the most important 'Puru', the father of Indra or the husband of Aditi***

("viduṣte asya viryasya Pūravah Puro yad Indra shāradir avātiraḥ sāsahāno avātirah").

"This thine heroic power-men of old time have known wherewith thou breakest down, Indra, autumnal forts, breakest them down with conquering might" (Griffith). Here 'men of old' should be replaced by 'members of Puru Family' to translate the mantra properly. Säyaṉa has interpreted 'Püravah' as 'manumyah' (men). But the correct meaning is 'The descendants of Puru'. Here Indra has also been designated as Puru, which indicates that Indra belonged to the family of Puru. At another place Indra is called the foremost amongst Purus. This expression, 'Purūtamam Purūṉām' has not been rightly understood by Säyana:

("Purūtamam Purūṉām ishānam vāryāṉām Indram some sacă sute").

Lauding Saraswati, Vasistha says that the descendants of Puru lived on the banks of Saraswati: ("ubhe yat te mahinā shubhre andhasi adhikşiyanti Püravāh").

*Thus we contend that **Puru was the founder of Aditya dynasty, a branch of the Devas.** He must have been the husband of Aditi though specific mention is not found in the Vedas to this effect, yet Aditi is named as 'Pürvih' too in the Rgveda suggesting that she was the wife of 'Puru' (Vide Chapter 3). Indra, Mitra, Varuņa, Vivasvat and Aryaman were his sons as shown earlier in the table. This dynasty flourished on the banks of the river Saraswati. In support of our contention we further add that Sayaņa too in the following mantra translates 'Paura' as the son of a king named 'Puru':*
("shagdhi na asya yaddha Pauram avitha dhiya Indra sişāsatah").
As Indra is designated a Puru, so Varuņa, also his brother, is addressed as Puru: ("ayam eka itthā Puru ru caște vi vishpatih! tasya vratāni vashcarāmasi").

किताब – The Tribes and castes of the North Western Provinces and Oudh Volume IV (Year 1896)
लेखक *W. Crooke*

Page no 120

Panwar.—A noted sept of Rajputs who in name represent the ancient Pramara race. Colonel Tod calls them the "most potent of the Agnikula or fire races " The world is the Pramars " is an ancient saying, and Naukot Marusthali signifies the nine divisions into which the country from the Satlaj to the ocean was divided among them. By another theory they represent the Pauravas, the famous race which, after the time of Alexander, was predominant in Rajasthan under the name of Pramara.*

किताब – ऋग्वेदिक आर्य (प्रकाशन वर्ष 1956)

लेखक – राहुल सांस्कृतायन

पृष्ठ क्रमांक ९, भूमिका

चाहे अभी हम उन्हे अच्छी तरह पा या पहचान न सके हो, लेकिन सप्तसिन्धु की भूमि मे वह मिलेगे जरूर। सप्तसिन्धु का यद्यपि आधा ही अब भारत मे हैं पर यह आधा है, जिसमे सप्तसिन्धु के आर्यों के सबसे प्रभुताशाली जन पुरु, तृत्सु, कुशिक रहते थे।

पृष्ठ क्रमांक ३, सप्तसिंधु –

आर्यों के बहुत-से जनो के नाम ऋग्वेद मे मिलते हैं, पर जिस तरह बुद्ध-काल के सोलह जनपदों की भूमि को हम आज भी जान सकते हैं, वही बात सप्त-सिन्धु के जनपदो के बारे मे नहीं है। वैदिक काल के बाद, जनो के नामो को सप्त-सिन्धु की भूमि पर से जानबूझ कर मिटा दिया गया। जो पॉच प्राचीन जन (१।१०८।८)-- पुरु, यदु, तुर्वश, अणु, द्रुह्म-सप्त-सिन्धु के प्रधान स्वामी थे, उनका वहा फिर पता नहीं लगता!

पृष्ठ क्रमांक ९ आर्य -जन -

पाँच जनों में सबसे प्रतापी पुरु लोग सप्तसिन्धु के पूर्वी छोर पर बसे हुए थे,

२-आर्य -जन *- १) पांच जन--*

(१) पुरु-- यह जन ऋग्वेद-काल से कुछ पहले एक जन के रूप में, जान पडता हैं, परुष्णी (रावी) के पूर्व में रहता था। ऋग्वेद के समय इसकी कई शाखाएँ हो चुकी थी !

पृष्ठ क्रमांक ४५ –

अध्याय ७ , आदिम आर्य राजा

ऋग्वेद के सबसे पुराने पाँच जन (कबीले) थे--द्रुह्य, अनु यदु तुर्वश और पुरु । सम्भव है इन जनो के नाम अपने किसी पूर्वज नेता के ऊपर पडा हो। .... सीमान्त पर विरोधियो का भारी डर था, इसलिए वहाँ आर्यों के वही जन टिक सकते थे, जो सख्या और बल मे अधिक थे। पुरु जन ऐसा ही था। पीछे इसी पुरु जन मे कुरु पैदा हुए, जिन्होने जमुना और गगा की उपत्यकाओ मे अपने प्रभुत्व का विस्तार किया, लेकिन, यह ऋग्वेद से पीछे की बात है। ......

*ऋग्वेदकालीन राजाओ के पहले के राजाओ की ओर जब हम ध्यान देते हैं, तो पॉच ही प्रभावशाली राजा पाते हैं--- मनु, पुरुरवा, नहुष, ययाति और मान्धाता। **पुरुरवा का सम्बन्ध सम्भवत पुरु जन से था। ......***

किताब – भारत इतिहास और संस्कृति

लेखक – श्री गजानन माधव मुक्तिबोध

पृष्ठ क्रमांक – 31

आर्य जाती स्वयम कई जनों में बटी थी ! ..... **उस काल में पुरु जाती का बहुत प्रभाव था !** किन्तु साथ ही भरत नामक जाति भी बहुत महत्वाकांक्षी थी ! **'पुरु आर्य' कहलाने वाले आर्य जन अपने को शुध्द रक्त वाले समझते थे !**

किताब – वैदिक कोश

प्रकाशक - वैदिक रिसर्च समिति , बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी (सन १९६३)

पृष्ठ क्रमांक – ४६

त्रसदस्यु के इक्ष्वाकु-कुल से संवद्ध होने का प्रमाण / शतपथ ब्राह्मण (१३. ५. ४. ५) में पुरुकुत्स के ऐक्ष्वाकु होने के रूप में मिलता है । इस प्रकार इक्ष्वाकु राजाओं का वंश मूलत: पुरु राजाओं का वंश था । त्सिमर ने उनका सिन्धु की ऊपरी घाटी में निवास बताया है, कितु संभवतः वे इससे कुछ पुरव की ओर रहते थे? बाद में इक्ष्वाकु का संबन्ध अयोध्या से बताया गया है ।

किताब – मुहनोत नैनसी की ख्यात भाग १

लेखक नैनसी का जन्म १६१० में हुआ था !

ख्यात के अनुसार

वंशावली (१) - आदि जुगादि, कमल . ब्रह्मा, मरीच, **कश्यप,** धूमऋषि , राजपाल, **राजा पुरुराई (पुरुरवा)** धर्मांगद, धरणीबराह, धारगिर, धाहड, धीरसेन, पोहपसेन, लखसेन, बुधसेन, कालसेन, इंद्र, चित्रांगद, गंधर्वसेन, **बीर विक्रमादित्य**, विक्रमचरित, राणा अजयभूपाल, महपाल, मधुर, चन्द, गोशील, राजा सिंधल, **राजा भोज,** राजा उदेकर्ण, देवकर्ण, सत्त, सिवर, सालवाहन, हंस, हरिवंस, सिंधु, मधु, ध्रुमज्वालक, बुधाईव, माघ, **उधादित्य, जगदेव, पातलसिंह**, राणा गुणराज, राणा लाखण, ...

वंशावली नं० (२) - **पंवार, पुरुरुवा**, कलिंग, इन्द्र, गंधर्वसेन, **वीर विक्रमादित्य,** भरथरी (भर्तृहरी), वीकमचित्र, सालवाहन, सृतनख, गौदभ, गौ-पिण्ड, महिपिण्ड, राजा कीर्तन, हंसराजा, सिंधलसेन, **भोज धार का धणी,** राजा बंध, राजा उद्देवंध, उदैबंध के पुत्र राजा रिणधवल, ...

किताब – Balaghat Gazetteer
पृष्ठ क्रमांक १०० पर उल्लेख है की –

The Ponwars or Pramaras as they were called are Kshattriyas in origin . They are said to have ruled in Marwar and afterwards in Malwa and to have numbered among their caste the famous ruler of Ujjain Vikramaditya **.**

(पँवार या प्रमार जैसा कि उन्हें कहा जाता था, मूल रूप से क्षत्रिय हैं। कहा जाता है कि उन्होंने मारवाड़ में और बाद में मालवा में शासन किया और उनकी जाति में उज्जैन के प्रसिद्ध शासक विक्रमादित्य की गिनती की गई।)

Book – Annals and Antiquities of Rajasthan
Year - 1829
Author – James Todd
Chapter – Annals of Mewar
Page no - 213

*The Porus is a corruption of **Puar** , once the most powerful and conspicuous tribe in India , classically written as Pramara, the dynasty which ruled at Oojein for ages .*

किताब – विक्रम स्मृति ग्रन्थ

प्रकाशन – सिंधिया ओरिएण्टल इंस्टिट्यूट के तत्वाधान में प्रकाशित

सन – १९४४

श्री अनंत वामन वाकणकर द्वारा लिखित लेख मालव मणि भोज

पृष्ठ क्रमांक – ५७४

स्वर्गिय राजरत्न पंडित के के लेले ने उमराओ के वंश से , टेहरी गढवाल के राजवंश से , सिंध के पवारो से , गुजरात , बिजौलिया , भंडारा , गोंदिया , सिवनी एवं वैनगंगा के पवार वंशो तथा मराठा पवारो के साथ कुछ पत्र व्यवहार किया था ! परम्परा के संयोजक तत्वों के अत्यधिक अनुपस्थिति में वे किसी प्रमेय को दृढ़ न कर सके ! आज हम केवल यही कह सकते है की अचलगढ़ से बागड़ (डोंगरपुर बांसवाडा) होते हुए परमार मालवा , मंदसौर , उज्जैन तथा धार पहुचे ! पश्चात् राष्ट्रकुटो के अधीन वे दक्षिण की ओर स्थानांतरित हुए ! फिर ऐसा प्रतीत होता है की मुसलमान सुल्तानों के अत्यधिक दबाव के कारण परमार राजवंश के मालवा से परास्त होने से कुछ कुटुंब गुजरात , वैनगंगा , मध्य भारत तथा दक्षिण की ओर पुनः स्थानांतरित हुए !

पृष्ठ क्रमांक – ५७७

यह वंश आरम्भकाल में अचलगढ़ से विनिर्गत हुआ ! पहले बागड़को फिर उज्जैन , धार तथा उससे भी आगे वैनगंगा के तीरों को गया , पुनः अवन्ती देश के आकर्षण केंद्र उज्जैन को जितने के लिए वापस उज्जैन तथा धार की ओर गया !

ग्रन्थ – बृहत्संहिता

ग्रंथकार – श्री वराहमिहिर

अध्याय – १८वा

उत्तरतः स्वसुतस्य शशाङ्कः ***पौरजयाय*** *सुभिक्षकरश्च ।*
सस्यचयं कुरुते जनहार्दि कोशचयं च नराधिपतीनाम् ॥ ३ ॥

अर्थात-

चन्द्रमा बुध के उत्तरमें जाय तो पौर जय हेतु, सुभिक्षकारी, धान्यवर्द्धक, मनुष्योंको आनन्ददायी और राजाओंका कोशसंचारी होता है ॥ ३ ॥

बृहस्पतेरुत्तरगे शशाङ्के ***पौरद्विजक्षत्रिय****पण्डितानाम् ।*
धर्मस्य देशस्य च मध्यमस्य वृद्धिः सुभिक्षं मुदिताः प्रजाश्च ।।४।।

अर्थात

बृहस्पतिके उत्तरमें चंद्रमा जाय तो पौर द्विजक्षत्रिय पंडित और मध्यदेशके धर्मकी वृद्धि होती है, सुभिक्ष होता है, प्रजा संतुष्ट होती है ॥ ४ ॥

--

किताब – Ancient India as described by Ptolemy

A translation of the chapters which describe India and Central and Eastern Asia in the TREATISE ON GEOGRAPHY written by Klaudios Ptolemaios , the celebrated astronomer

लेखक – J W McCrindle

Publisher – Trubner & co London
Year – 1885
Page 164, 165

Porouaroi (Porvaroi)*: — This is the famous race of the Pauravas, which after the time of Alexander was all predominant in Rajasthana under the name of the Pramaras. The race figures conspicuously both in the legendary and real history of the North of India. It is mentioned in the hymns of the Veda, and frequently in the Mahdbhdrata, where the first kings of the Lunar race are represented as being Pauravas that reigned over the realms included bebween the Upper Ganges and the Yamuna. The later legends are silent concerning them, but they appear again in real history and with fresh distinction, for the* ***gallant Poros****,* ***who so intrepidly contended against Alexander on the banks of the Hydaspas****, was the chief of a branch of the Paurava whose dominions lay to the west of that river, and* ***that other Poros who went on an embassy to Augustus and boasted himself to be the lord paramount of 600 vassal kings was also of the same exalted lineage.*** *Even at the present day some of the noblest houses reigning in different parts of Rajasthan claim to be descended from the Pauravas, while the songs of the* ***national bards still extol the vanished grandeur and the power and glory of this ancient race*** *. In. the position indicated the name even of the Porouaroi is found*

almost without alteration in the Purvar of the inscriptions, in the Poravars of the Jain clans, as much as in the designation spread everywhere of ***Povars and of Pouars,*** *forms variously altered, but still closely approaching the classic Paurava {Etude, pp. 357 sqq.)*

--

भाषाए

मानव समाज में भाषा केवल संचार का साधन नहीं, बल्कि सांस्कृतिक, ऐतिहासिक एवं बौद्धिक विकास का दर्पण भी है। प्रत्येक प्राणी अपने अस्तित्व की अभिव्यक्ति हेतु किसी न किसी ध्वनि या संकेत का उपयोग करता है, किन्तु मनुष्य ने व्यवस्थित ध्वनियों को शब्दों में तथा शब्दों को भाषा में रूपांतरित कर संवाद की एक विशिष्ट प्रणाली का विकास किया। भाषा का यह स्वरूप किसी विशेष क्षेत्र अथवा समुदाय में पल्लवित होकर प्रचलित होता है, जिसे हम "बोली" कहते हैं।

भाषाओं का विकास और विलुप्ति

मानव सभ्यता के इतिहास में अनेकों भाषाओं एवं बोलियों का उद्भव हुआ है। समय की गति के साथ कुछ भाषाएँ निरंतर विकसित हुईं और दीर्घकाल तक जीवित रहीं, वहीं अनेक भाषाएँ एवं बोलियाँ लुप्त भी हो गईं। भाषाओं के अस्तित्व और निरंतरता का मूल कारण उनका साहित्यिक एवं व्याकरणिक रूप में संगठित होना रहा है। जिन भाषाओं ने लिखित साहित्य और व्यवस्थित व्याकरण का निर्माण किया अथवा जो मौखिक परंपरा द्वारा पीढ़ी-दर-पीढ़ी स्थानांतरित होती रहीं, वे आज भी विद्यमान हैं।

संस्कृत: एक शास्त्रीय भाषा

प्राचीन भारतीय भाषाओं में संस्कृत विशेष महत्व की भाषा है। "संस्कृत" शब्द का व्युत्पत्ति अर्थ है—"संस्कारित अथवा परिष्कृत भाषा"। पाणिनि, कात्यायन तथा पतंजलि जैसे आचार्यों द्वारा निर्मित संस्कृत व्याकरण भाषा की परिपूर्णता और वैज्ञानिकता का अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत

करता है। संस्कृत के साहित्यिक वैभव और व्याकरणिक संरचना से यह स्पष्ट होता है कि इसका प्रयोग करने वाला समाज उच्च स्तर की भाषिक चेतना और बौद्धिक परिष्कार से संपन्न रहा होगा।

प्राकृत एवं अन्य प्राचीन भाषाएँ

संस्कृत के साथ-साथ प्राचीन भारत में प्राकृत, पैशाची, पाली आदि भाषाएँ भी प्रचलित थीं। प्राकृत भाषा को संस्कृत की प्राकृतिक अथवा लोक-आधारित प्रतिरूप माना जाता है, जिसका प्रयोग सामान्य जनमानस की बोली के रूप में होता था। यह सम्भावना भी प्रबल है कि संस्कृत का शास्त्रीय व्याकरण इन्हीं जनभाषाओं के आधार पर व्यवस्थित किया गया हो। परंतु कालांतर में प्राकृत, पैशाची और पाली जैसी भाषाएँ क्रमशः लुप्त हो गईं, जबकि संस्कृत अपने शास्त्रीय साहित्य और विद्वानों के संरक्षण के कारण आज भी जीवित है।

भाषाओं का आपसी प्रभाव

इतिहास में मानव समुदायों का सतत् स्थानांतरण हुआ है। इस कारण भाषाओं के बीच परस्पर प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। विभिन्न भाषाओं एवं बोलियों में समान शब्दावली, ध्वन्यात्मक विशेषताएँ और व्याकरणिक तत्व इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं कि भाषा मात्र संचार का उपकरण नहीं, बल्कि मानव इतिहास की सजीव अभिव्यक्ति भी है।

जनभाषाएँ और बोलियाँ

शास्त्रीय भाषाओं के समानांतर सदैव जनभाषाएँ और बोलियाँ अस्तित्व में रही हैं। ये बोलियाँ किसी विशेष क्षेत्र, समुदाय अथवा कालखंड के

सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप को अभिव्यक्त करती हैं। जनभाषाओं का स्वरूप गतिशील एवं परिवर्तनशील होता है। यही कारण है कि समय के साथ बोलियों में निरंतर परिवर्तन होता रहा है और भविष्य में भी यह प्रक्रिया जारी रहेगी।

संरक्षण की आवश्यकता

कई बोलियाँ साहित्यहीन रही हैं, जिसके कारण उनके उद्भव और विकास का सटीक इतिहास ज्ञात नहीं हो पाता। तथापि यह तथ्य निर्विवाद है कि कोई भी भाषा अथवा बोली अकस्मात उत्पन्न नहीं होती; उसका विकास दीर्घ ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम होता है। इन बोलियों में निहित शब्दावली केवल ध्वनियों का समूह नहीं, बल्कि ऐतिहासिक अनुभव, सांस्कृतिक स्मृति और सामाजिक ज्ञान का संवाहक भी है।

इस दृष्टि से आवश्यक है कि जनभाषाओं और बोलियों का संरक्षण किया जाए। कम-से-कम उनके साहित्यिक अंश, लोककथाएँ, गीत, कहावतें और शब्दावली लिखित रूप में संकलित की जानी चाहिए, ताकि वे आने वाली पीढ़ियों के लिए उपलब्ध रह सकें।

भाषा का इतिहास मानव सभ्यता का इतिहास है। संस्कृत जैसी परिष्कृत एवं वैज्ञानिक भाषा हमें यह बोध कराती है कि प्राचीन भारत में भाषाविज्ञान और साहित्य की परंपरा अत्यंत उन्नत थी। साथ ही, जनभाषाएँ और बोलियाँ समाज के वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करती हैं। अतः भाषाओं के शास्त्रीय और लोक—दोनों स्वरूपों का संरक्षण अनिवार्य है, जिससे हम न केवल अपने अतीत को समझ सकते हैं, बल्कि भविष्य की सांस्कृतिक धरोहर को भी सुरक्षित रख सकते हैं।

पोवारो के वर्तमान भाषा का परिचय

प्राचीन पोवार समुदाय की भाषा समय के साथ बदली ! अब उनकी जो वर्तमान भाषा है उसे पोवारी कहा जाता है ! यह वर्तमान बोली उन्होंने समय व् स्थान के असर के साथ अवगत कर ली है ! पहले भाषा सर्वेक्षण के अनुसार अगर हम व्याख्या करे तो"**पोवारी**" यह बोली पोवार या पँवार लोगो की बोली है जो पश्चिम मालवा से आकर मध्यभारत में बसे है ! मध्य भारत एक ऐसा क्षेत्र है जहा अनेक समुदाय उत्तर भारत , उत्तर पश्चिम भारत से स्थानांतरित है ! जो भी यहा समय के साथ आया अपने साथ अपनी बोली ले आया ! इस कारण यहाँ समुदाय या जातिगत बोलिया प्रचलित है ! इन बोलियों के नाम भी उन्ही समुदायों के नाम पर पड़े है ! जैसे **पोवार समुदाय - पोवारी** , मरार समुदाय - मरारी , लोधी समुदाय - लोधी , कोष्टी समुदाय - कोष्टी , कलार समुदाय - कलारी , भोयर समुदाय - भोयरी , गोवारी समुदाय - गोवारी, गोंड समुदाय - गोंडी आदि ! इन समुदायो में कुछ स्थानीय है तो कुछ स्थानांतरित समुदाय है! जो समुदाय अतीत में जिधर से आया था , वहाके क्षेत्र का प्रभाव उस समुदाय की बोली पर साफ दीखता है !

भारत की बोलीयो / उपभाषाओ का व्यवस्थित रूप से अध्ययन भारत के पहले **भाषासर्वेक्षण** (Linguistic Survey of India) में किया गया ! यह अध्ययन **श्री जी. ए. गियरसन** द्वारा किया गया ! उस समय के नमूने भी संजोकर रखे गए है ! यह **सर्वेक्षण सन १८९४ से शुरू हुआ**और **पहला**

प्रकाशन १८९८ में प्रकाशित हुआ ! यह सर्वेक्षण करीब तीस साल चला! इस सर्वेक्षण से प्राप्त जानकारी **९ खंडो में** प्रकाशित की गयी ! हर खंड के और भाग भी है ! इस सर्वेक्षण से पुरे मिलाकर **२१ ग्रन्थ निर्माण** हो गए थे जो अपने आप में एक धरोहर है ! भारतीय बोली व् भाषाओ को बहुत बारीकी से अध्ययन कर उन्हें आधिकारिक रूप से संरक्षित करने का बड़ा कार्य उस समय हुआ है ! इस सर्वेक्षण में पोवारी को भी स्थान दिया गया है ! **पोवारी बोली** का उल्लेख पहले **भाषा सर्वे के खंड ६ के पृष्ठ क्रमांक १७७ से १७९** के बीच उल्लेखित है ! भारत के पहले भाषा सर्वे में पोवारी को **आर्य भाषा/ इंडो आर्यन / पूर्वी हिंदी व् बघेली की उपभाषा** के रूप में उल्लेखित किया गया है ! यह **खंड ६ सन १९०४ में प्रकाशित** हुआ था !
भारत के पहले भाषा सर्वेक्षण (**Linguistics Survey of India**) में पोवारी भाषा का उल्लेख निम्नलिखित है जो जैसे है वैसे ही प्रस्तुत है -

Powari is the language of the Powars , an agricultural tribe which traces its origin to the Rajpoot Pramaras of Malwa, whence the members of the caste have spread over northern India and in later times formed the extensive colonies which we find in the Wainganga Valley at present day . The traditional home of these members of the tribe is Dhar in Central India Although Powars are found all over the Central provinces , a distinct Powar dialect has been reported only from the Districts of Chhindwara , Balaghat and Bhandara. Further Inquiry shows that even this return erred by excess , for the Powars of Chhindwara are now stated to have no peculiar dialect of their own . The number of Powars in Bhandara and Balaghat are according to the census of 1891 as follows –

Balaghat - 43564
Bhandara – 70040

The number of speakers of Powari returned from these districts is much less than the above viz-

Balaghat – 41300
Bhandara – 1700
Powari, like Marari cannot be properly called a Dialect. It is really a jargon, the basis of which is the Bagheli which we find in Mandla, mixed up very freely with forms coming from the original home of the tribe in Western Rajputana and with Marathi . For instance , in the following specimens, word like deis , he gave ; leis he took , are bagheli ; But konhi , a certain ; hota, they were ; aparo or aparo , own ; and the case sign la, are corruption of Marathi ; and se is ; khan , in kar khan , having done , come from Western Rajputana . Note also the use ne with a Bagheli past tense , which we have noted in Marari .

Two short specimens of Powari are given , one from Balaghat and other from Bhandara . --

Bagheli (Powari Broken) Dialect (District Balaghat)

कोन्ही मानुसका दुइ बेटा होता ! ओ-मा-ल्हे लाहानो-ने अपरे बाप-ला कहिस हे बाबा सम्पति मा-ल्हे जो मोरो हिस्सा से ऊ दे-देव ! मग वो-ने उन-ला आपरो धन बाँट देइस ! जुग रोज नही भया , नाहनो बेटा सब येकुजिया कर-खन दूर देस-ला चली गयो ! वहा जाय-खन लुचपना-माँ सब सम्पति खोय देइस ! जब वो सब उड़ाय देइस मग उन देस-में अकाल पड़ेव् ! अखिन ऊ गरीब भै गयो ! अखिन ऊ जाय-खन वने देस –के रहनार –मा –ल्हे एक घरे रहन लगेव ! जे-ने ओ-ला आपलो खेत-माँ डूकर चरावनला पहुचाइस ! अखिन ऊ उन खोलपा-मा-ल्हे जेला डूकर खात

होतो , आपन पेट भरन चाहोत होतो अखिन कोन्ही नही ओला काही देत होतो !!

Bagheli(Powari Broken) Dialect (District Bhandara)

एक मानुस-ला दुई बेटा होता ! ओको नहानो बेटा बाबा-ला कहोत होतो बाबा, मोरो माल-मत्तो-का हिसा मोरो तोड़ दो ! मंग आपरो मालमत्ता बाट देइस ! मंग धाकटो बेटा माल-मत्ता जमा कर -कन दूर देस को निकल गयो ! आनिक अपरो मन-ले बरतावा कर-लेइस , सरबी सम्पत उड़ाय देइस ! वोतई जमा खरच डाइस ! ओन मुलुख-मो बड़ा दुकार पड्यो होतो ओन बात-सो लंगी जा-से वो-ला ! ओ-को बाद ओन मुलुख -को एक मानुस के जवर रह्यो ! ओन डूकर चरावन अपरे खेत में धाडिस ! ओ-ने डूकरन फोल खाईस ! उच फोल खाय-के अपरो पेट भरू अस ओन दिल-म अपर सोचिस ! आनिक कोईन ओ-ला काही नही देइस !!

श्री गियरसन पोवारी बोली सबंधित जो लिखे , उसका हिंदी अनुवाद –

पोवारी, यह पोवारों की भाषा है, जो की कृषि करने वाली जाती है , जिसकी उत्पत्ति के सबंध में पता चलता है की वे मालवा के राजपूत प्रमारहै , जहा से इस जाति के सदस्य उत्तरी भारत में फैल गए हैं और बाद के समय में उन्होंने व्यापक रूप से उन बसाहटो को स्थापित किया जो हम वर्तमान में वैनगंगा घाटी में पाते हैं। इस जाति के इन सदस्यों का पारंपरिक घर मध्य भारत में धार है ! हालांकि पोवार पूरे मध्य प्रांतों में पाए जाते हैं, एक अलग पोवार बोली केवल छिंदवाड़ा, बालाघाट और

भंडारा जिलों से दर्ज की गई है। आगे की जांच से पता चलता है कि इस रिपोर्ट में भी अधिक गलती हुई क्योंकि छिन्दवाड़ा के पोवारों के बारे में कहा जाता है कि उनकी अपनी कोई विशिष्ट बोली नहीं है ! भंडारा और बालाघाट में पोवारों की संख्या 1891 की जनगणना के अनुसार इस प्रकार है -

बालाघाट - ४३५६४
भंडारा - ७००४०
इन जिलों से पोवारी के बोलने वालो की संख्या उपर दी जनसंख्या की तुलना में बहुत कम है जैसे-
बालाघाट -४१३००
भंडारा - १७००

मरारी की तरह पोवारी को ठीक से बोली नहीं कहा जा सकता है। यह वास्तव में एक वर्ग बोली है, जिसका आधार बघेली है जो हम मंडला में पाते हैं, जो पश्चिमी राजपूताना में जनजाति के मूल घर से आने वाले रूपों के साथ और मराठी के साथ बहुत स्वतंत्र रूप से मिश्रित है। उदाहरण के लिए, निम्नलिखित नमूनों में, ***"देइस"*** *जैसे शब्द,जिसका अर्थ उन्होंने दिया;* ***"लेइस"****- जिसका अर्थ उन्होंने जो कुछ लिया,ये शब्द बघेली हैं; लेकिन* ***"कोन्ही"*** *जिसका अर्थ कोई है ,* ***"होता"*** *का अर्थ वे थे;* ***आपरो या अपरो*** *जिसका अर्थ स्वयं का; और जैसे* ***"ला",*** *यह शब्द मराठी का अपभ्रंश है; और* ***"से"*** *जिसका अर्थ है होता है ;* ***"खन"*** *जो कर-खन में इस शब्द में है, पश्चिमी राजपूताना से आया है। बघेली भाषा में भूतकाल के लिए उपयोग में लाया जाने वाला* ***"ने"*** *का पोवारी में उपयोग ध्यान देनेयोग्य है जिसे हमने मरारी में भी पाया ! ....*

श्री गियरसन द्वारा जो पोवारी बोलने वालो की संख्या दी गयी है वह कुछ कम लगती है ! जबकि भंडारा जिले में उस समय १०० % लोग पोवारी बोलते थे ऐसा बताया जाता है ! आज भी गावो में पोवारी बोलने वालो की संख्या इससे काफी बड़ी है !

वर्तमान समय में श्री गियरसन द्वारा दिया गया भाषा का पोवारी बोली का नमूना अगर लिखा जाये तो कुछ इस प्रकार होगा –

"एक मानुस-ला दुई बेटा होथा ! ओकोनहानो बेटा आपरो बापला कवन लग्यो , अजी , मोरो माल-मत्तो-को हिस्सा मोला देयदेव ! मंग वोन आपरो मालमत्ता बेटाइनमा बाट देइस ! वोको बाद नहानो बेटा माल-मत्ता जमा करखन दूर देस निकल गयो ! अना वोन उतन आपरो मनमुताबिक बरताव करके , लुच्चापना मा सब सम्पत उड़ाय देइस ! वोतई जमापूंजी खरच कर डाकीस ! ओन मुलुखमा बडो अकाल पड्यो होतो ! वोको कारण ऊ अखिन च गरीब भैय गयो! ओको बाद वू ओन देसका रव्हनारमा लक एक मानुस को घरऽ रव्हन लग्यौ ! ओन मानुस न वोला डूक्कर चरावनलायी आपरो खेत मा धाडिस ! डूकर जो फोल खासे , उच फोल खायके अपरो पेट भर लेवु असो वू दिलमासोचसे, काहेकी कोनि बी ओ-ला काही देत नोहोतो !"

अब वर्तमान में पोवारी इसी प्रकार की पायी जाती है ! कुछ परिवर्तन आया है जैसे १९१० के दरम्यान लिए नमूने में लिखे शब्द **ओने** के बजाये अब **ओन** कहा जाता है ! **रहनार -मा -ल्हे** के बजाये अब **रव्हनारमा लक**

कहा जाता है ! **सरबी** के बजाये अब **सब** कहते है **! ने , माल्हे या माहे** , **सरबी** आदि शब्द पुराने राजस्थानी साहित्य में मिलते है जो पुरानी पोवारी में थे !

और एक बात ध्यान देने योग्य है की उन्होंने छिंदवाडा में पोवारी नही होने की बात कही है ! छिंदवाडा में पोवार जनसंख्या नही के बराबर होने से ऐसा हुआ ! भारत की जनगणना जो १८७२ में हुयी उसमें छिंदवाडा में सिर्फ ७६ पोवार होने की बात लिखी है ! सम्भवतः ये लोग पोवारी छोड़ वहा की स्थानीय भाषा बोलते रहे हो ! पोवारी सिर्फ सिवनी, बालाघाट , भंडारा (आजका गोंदिया + भंडारा जिला) इन जिलो में पायी जाती थी ! नागपुर जिले में रामटेक के पास दो गाव है जिनमे पोवार बसे है और वहा पोवारी प्रचलित है ! वे गाव है महाराजपुर व् डोंगरी ! इसके अलावा जो लोग बादमे इन क्षेत्रो से बड़े शहरो में गए वे पोवारी जानते है ! परन्तु इन जिलो के अलावा जो बाहर गये उन्होंने अन्य भाषाए अपनायी क्योंकि उनके आसपास अन्य भाषा बोलने वाले लोग जुड़े थे !

भारत के पहले भाषा सर्वे के पहले भी यानि १८९८ के पहले पोवार या पंवार समुदाय की भाषा का उल्लेख ब्रिटिश दस्तावेजो में मिलता है ! पोवारीबोली का साहित्य पुराने समय में लिखा गया या नही यह पता नही चलता ! साहित्य लिखा गया भी हो, तो वह साहित्य प्रचारित नही हुआ या सुविधा नही होने के कारण उस साहित्य का प्रकाशन नही हुआ ! हालाकी पुराने समय से चले आ रहे पोवारी बोली में वैवाहिक मंगल गीत एक प्रकार से साहित्य ही है जो पीढ़ीयो से कंठस्थ किया जा रहा है !

भारतीय भाषा साहित्यमें विशेष रूप से यह पोवारी साहित्य है , ऐसा लिखा नही मिल पाता ! हालाकी पोवारी में उपयोग में आनेवाले काफी शब्द उत्तर पश्चिम व् मध्य भारत की भाषाओ , बोलीयो , साहित्य शैली में जरूर मिलते है !

पोवार समुदाय का नाम पुराने ब्रिटिश दस्तावेजो मेंपोवार , पंवार , पँवार, पोंवार , पुवार , पुआर , प्रमार , परमारा आदि लिखा गया है उसी प्रकार उनकी बोली का नाम भी अलग अलग स्वरूप में मिलता है ! मध्यभारतीय पोवारो या पंवारोसे सबंधित सन १८२७ के बाद से ब्रिटिश दस्तावेज उपलब्ध है! ब्रिटिश दस्तावेजो का अवलोकन किया जाये तो पोवारो की बोली का पहला उल्लेख सन १८२७ की रिपोर्ट में आता है ! यानि आजसे १९७ साल पहले के दस्तावेजो में बोली का उल्लेख है ! उस समय अंग्रेज पोवारो की बोली को हिन्दी लिखते है !

<u>**सन १८२७** के निम्नलिखित ब्रिटिश दस्तावेज</u>–

Report on the Territories of the Rajah of Nagpore , submitted to the Supreme Government of India , by Richard Jenkins , Esq. (Resident at the Court of his Highness The Rajah Of Nagpore)में पोवार समुदाय के बोली का उल्लेख आता है !

इस रिपोर्ट के पृष्ठ क्रमांक २४ पर उल्लेख इसप्रकार आता है -

Generally, the languages prevailing in the above districts are , in Deogurh above the Ghats, a mixture of the Rangree, or Hindee , of Malwa, and the Marhatta, with the Gondee and Guolee dialects. The two former are common to the whole population , whilst the Gondee

and Guolee are familiar only to the peculiar tribe to which either belongs, viz . Guolees and Gonds.

In Deogurh below the Ghats, the Marhatta is the prevalent language. Besides Gondee, Telinga is also spoken by some tribes of artizans ; and there are several other petty tribes which have distinct dialects.

*In the WyneGunga district, the most common language is Marhatta. The Guolees speak a dialect of Canarese ;**the Puwars and Lodees, Hindee** **and there are a few other varieties of dialect** .*

In the Chanda district , the Marhatta and Telinga languages seem to be spoken by the people, in nearly equal proportion.

इस दस्तावेजो में श्री जेनकीन्स मराठी को मराठा भाषा कहते है और पोवारो की बोली को **हिंदी बोली** कहते है ! उस समय वे पोवारो की भाषा को हिंदी समझे क्योंकि उस समय हिंदी बहुल क्षेत्रो में जो हिंदी भाषा प्रचलन में थी वह पोवारी , बुन्देली , बघेली , मालवी , निमाड़ी , भोजपुरी आदि से मिलतीजुलती ही थी ! हिंदी में भी अब २०० सालो में परिवर्तन आया है !

जन गणनाओ में भाषा का उल्लेख -

भारत में १८१९ में अंग्रेजो द्वारा जनगणना शुरू करने की बात लिखी मिलती है जो पुराने समय में मराठा सरकार द्वारा की गयी जनगणना का ही एक रूप था जिसे खाना शुमारी कहा जाता था ! परन्तु वह विस्तृत रूप से नही हो पायी थी ! सन १८६६ में भारत में जनगणना होने के दस्तावेज मिलते है ! **सन १८७२ में भी जन गणना** प्रकाशित हुयी मिलती है ! तबसे २०११ तक जन गणनाये हुयी है ! जन गणनाओ में समुदाय व् उनकी भाषाओ का अध्ययन कर जानकारी संकलित कर

लिखी गयी ! उनमे पोवारो या पंवार समुदाय की बोली का विवरण क्या व् कहा है यह आगे जानेंगे -

<u>**सन १८८१ की जन गणना**</u> के **पृष्ठ क्रमांक १६२** में पोवारो की भाषा को **पोंवारी** लिखा मिला ! ब्रिटिश अधीन बेरार क्षेत्र में कुछ पोवार थे जिनकी बोली उन्होंने पोंवारी दर्ज की ! **पोंवारी को हिंदी की एक बोली** कहा गया है जो **क्रमांक २४** पर लिखी है ! पृष्ठ क्रमांक १६३ पर लिखा मिलता है की हिंदी की आर्य बोलिया विभिन्न प्रकार की है जैसे राजपूताने की , मध्य भारत की व् हिन्दुस्थान के अन्य क्षेत्रो की ! **राजपूताने की बोलियों में पोंवारी , रणछोड़ी व् राजपूती शामिल है !**

<u>सन १८८१ , Report of the Census of British India Volume I , ---</u>

पृष्ठ क्रमांक २७९ पर पोवार संख्या - १०६०८१ लिखी गयी है !

पृष्ठ क्रमांक २९५ पर पुनः लिखा है की १०६०८१ पोवार दो प्रोविंस में पाए गये ! इनमेसे ५ लोग हैदराबाद प्रोविंस में मिले जो खुदको पवार कहते है और बाकि पुरे पोवार सेंट्रल प्रोविंस में बसे है जिनका सामाजिक स्थिति व् स्थान अच्छा है !

<u>**सन १८९१ की जनगणना**</u>- Census of India 1891 Volume XI , The Central Provinces and Feudatories , Part 1 , The Report , by B. Robertson of the Indian Civil Service , Provincial Superintendent of Census Operations published in 1893 . इस दस्तावेज के पृष्ठ क्रमांक १३२ से भाषाओ के बारे में विस्तृत रूप से वर्णन दिया है !

पृष्ठ क्रमांक १३६ पर लिखा है की *भोयरी , गोवारी , कतियायी ,* ***पोवारी*** *आदि बोलिया जिस जाती के लोग बोलते उस जातीका नाम दर्शाती यह जन भाषाए है !*

यानि जाती के नाम से जन भाषाओ के नाम पड़े !

*हिंदी बोलियाँ के नाम दरअसल केवल जातियों के नाम हैं, जो जातीया आपस में संभाषण के लिए एक विशेष बोली स्वरूप का उपयोग करते हैं, इन स्वरूपों के लिए जाति का नाम सबसे स्वाभाविक तरीके से दिया गया - जैसे भोयारी, गोवारी, कटियाई, **पोवारी** आदि।.*

पृष्ठ क्रमांक १६५ --

….Seoni district on the Satpura plateau, and in Bhandara and Balaghat in the Maratha country. In the three latter districts the preponderance of the caste is due to the presence of the Powars, by far the largest section of the Rajputs in these parts.

The Powars trace their origin to the Pramaras of Malwa, whence the members of the caste have spread over Northern India and in later times formed the extensive colonies which we find in the Wainganga valley at the present day.

*In the northern districts of the Province it is probable that the Powars are offshoots from the settlements in Upper India, but in the Nagpur country and on the Satpuras the **Powars** are immigrants of a later period from Dhar in Central India, which is the traditional home of the tribe. Their first appearance in these parts was at Nandardhan near Ramtek, in the Nagpur district, where they built a fort and settled several villages, and whence as time went on they spread themselves to the east of the Wainganga. Some of the more influential members of the caste accompanied Chimnaji Bhonsla in the Cuttack expedition, and on their return were given lands in the lowlands of the present districts of Bhandara and Balaghat. From here about the commencement of the present century they first set out to people the waste lands above the ghats, where they have all along been among the most successful of the settlers who have helped to reclaim these wilds.......*

..... The distribution of the Powars in the three districts of the upper Wainganga valley is worth noting; they occur , it will be seen, all

over Balaghat, but in Seoni they are confined to the southern portion of the district, and in Bhandara to the northern tehsil.

अर्थात

सतपुड़ा पठार पर सिवनी जिला, और मराठा देश में भंडारा और बालाघाट इन तीन जिलों में राजपूत जाति की प्रधानता पोवारों की उपस्थिति के कारण है, जो इन हिस्सों में राजपूतों का अब तक का सबसे बड़ा वर्ग है। पोवार मूलतः मालवा के प्रमार होना पता चलता , इस जाति के सदस्य उत्तरी भारत में फैल गए और बाद के समय में व्यापक बसाहटो का गठन किया जो हम वर्तमान समय में वैनगंगा घाटी में पाते हैं। ब्रिटिश प्रांत के उत्तरी जिलों में यह संभव है कि पोवार उत्तर भारत से आये हो हैं, लेकिन नागपुर देश में और सतपुड़ा पर पोवार मध्य भारत के धार से बाद की अवधि में आये हैं, जो धार जाति का पारंपरिक घर है। इन हिस्सों में उनकी पहली उपस्थिति नागपुर जिले में रामटेक के पास नगरधन में हुई, जहां उन्होंने एक किले का निर्माण किया और कई गांवों को बसाया, और जैसे-जैसे समय बीतता गया, उन्होंने खुद को वैनगंगा के पूर्व में फैला लिया। जाति के कुछ अधिक प्रभावशाली सदस्य कटक अभियान में चिमनाजी भोंसला के साथ थे, और उनकी वापसी पर उन्हें भंडारा और बालाघाट के वर्तमान जिलों के निचले इलाकों में भूमि दी गई थी। यहां से वर्तमान शताब्दी की शुरुआत के बारे में उन्होंने पहली बार लोगों को घाटों के ऊपर बंजर भूमि के लिए तैयार किया, जहां वे सभी उन बसने वालों में सबसे सफल रहे हैं जिन्होंने इन जंगलों को पुनः प्राप्त करने में मदद की है ! ऊपरी वैनगंगा घाटी के तीन जिलों में पोवारो की बसाहट ध्यान देने योग्य है; वे पूरे बालाघाट में हैं, लेकिन सिवनी में वे जिले के दक्षिणी हिस्से तक और भंडारा में उत्तरी तहसील तक ही सीमित हैं।

<u>सन १९०१ की जन गणना</u> Census of India Volume XIII Central Provinces Part I Report , श्री रसेल (Superintendent of Census Operations) पृष्ठ क्रमांक १४९ पर लिखते है की भंडारा (अब गोंदिया + भंडारा) जिले के पँवार जो भाषा बोलते है वह उस क्षेत्र की भाषा नही है और अन्यो में प्रचलित नही , इसका मतलब है की वे ऐसे क्षेत्र में रहे है जहा उनकी भाषा बोली जाती रही होगी !

इसी रिपोर्ट के पृष्ठ क्रमांक ६० पर लिखा मिलता है - सिवनी , भंडारा , बालाघाट इन जिलो से **पोंवारी** दर्ज की गयी ! जो की एक वर्ग बोली है ! यह बोली जो पश्चिमी राजपूताना (पोवारो का मूल स्थान) क्षेत्र की भाषा का रूप है जिसमे मंडला की बघेली व् मराठी मिश्रित हो गयी है ! पोंवार बघेली मिश्रित बोली का उपयोग करते है इसका मतलब वे बालाघाट भंडारा गोंदिया आदि जिलो में पश्चिमी राजपूताने से मंडला जबलपुर होते हुए आये है !

<u>सन १९११ की जन गणना के ,</u> Census of India 1911 Volume X Central Province & berar Part 1 Report by J T Marten Superintendent of Census Operations पृष्ठ क्रमांक १८५ पर लिखा गया पोंवारी बोलने वाले करीब ३४००० है ! सन १९११ में १५११२०८ पोवारो में से सिर्फ ३४००० **पोंवारी** बोलने वाले दर्ज हुए जो संख्या कम लगती है!

आगे पृष्ठ क्रमांक १९५ पर लिखा मिलता है की - जाती व्यवस्था के कारण एक दुसरे की भाषा पर प्रभाव पड़ना कम हुआ ! पोवार लोग हिंदी बोलते है और भोयर लोग राजस्थानी बोलते है और ये दोनों जाती के लोग मराठा राज्य में मराठी लोगो से साथ प्रतिदिन जुड़े हुए है फिर भी उन्होंने **अपनी अपनी मूल भाषा बनाये रखी** है !

<u>सन १९२१ की जनगणना</u> के पृष्ठ क्रमांक १४६ पर राजपूत समूह में पंवारो की संख्या करीब १५२ ४६३ लिखी मिलती है जो सिवनी भंडारा बालाघाट क्षेत्र के कृषक व् जमींदार समुदाय के लोग है ! पंवारो की बोली को इस जन गणना में **पूर्वी हिंदी** में गिना गया दिखाई पड़ता है !

सन १९३१ की जन गणना , पृष्ठ क्रमांक ३०० , - भंडारा जिले के पोवारो द्वारा बोली जाने वाली भाषा को करीब ४००० लोगो ने अपनी मातृभाषा बतायी जो जन गणना टेबल्स में पूर्वी हिंदी का रूप बताया गया है ! जबकि भाषा सर्वे के अनुसार **पोवारी** बघेली का स्वरूप है और ४१३०० लोगो द्वारा बालाघाट में बोली जाती है तथा १७०० लोगो द्वारा भंडारा में बोली जाती है !

सन १९५१ के जन गणना के वॉल्यूम ७ मध्यप्रदेश के पृष्ठ १७९ पर पोवारी के साथ पवारी का उल्लेख किया गया है ! और पोवारी मात्रुभाषा बताने वालो की संख्या दी गयी है !

Sr no	District & state	Powari (pawari)	
		Male	Female
01	Bhandara	4099	5059
02	Balaghat	13014	13705
03	Chanda	30	30
04	Yeotmal	15	13
05	Chindwara	05	01
06	Betul	00	00

सन १९७१ की जनगणना के Brief notes on Mother Tongues के पृष्ठ क्रमांक २३ पर अनुक्रमांक ३५३ में पोवारी भाषा का उल्लेख है !

सन २००१ की जनगणना के Paper 1 of 2007 Language इस दस्तावेज में पृष्ठ क्रमांक ११ पर पोवारी को हिंदी की उपभाषा लिखा गया है ! हिंदी उपभाषा अनुक्रमांक ४२ पर पवारी / पोवारी का उल्लेख मिलता है ! पवारी / पोवारी को अपनी मातृभाषा बताने वाले लोगो की संख्या ४,२५,७४५ दर्ज की गयी है !

सन २०११ की जनगणना के Paper 1 of 2018 Language इस दस्तावेज में पृष्ठ क्रमांक ०६ पर पोवारी को हिंदी की उपभाषा लिखा गया है ! पवारी / पोवारी को अपनी मातृभाषा बताने वाले लोगो की संख्या ३,२५ ७७२ /- दर्ज की गयी है !

जन गणना के अलावा अन्य दस्तावेज –

सन १९२७ में प्रकाशित Central Province District Gazetteers Bhandra District , B. Volume statistical Tables 1891-1926 के पृष्ठ क्रमांक १३ में पोवार जाती को जनेउधारी (द्विज) समूह Group 1(a) में लिखा गया गया है और पृष्ठ क्रमांक १५ पर इन **पोवारो की बोली पोवारी** Powari (a Dialect of Pauars) लिखा मिलता है!

सन १९६४ में प्रकाशित विज्ञानं कोश इस किताब में डॉ भोलानाथ तिवारी *पृष्ठ क्रमांक ३७२ पर पोवारी के बारे में लिखते है ----*

पोंवारी--*बघेली (द्रे०) बोलीका बालाघाट और भंडारामें प्रयुक्त एक स्थानीय रूप । इसके बोलनेवालोंकी संख्या १८९१ की जनगणनाके अनुसार ७०,००० थी, किन्तु ग्रियसनके भाषा-सर्वेक्षणके अनुसार केवल ४३,००० थी । पोंवारी, बघेली, पश्चिमी राजस्थानी (जहाँ पोंवार लोगोंका आदिस्थान है) और मराठीका मिश्रित रूप है। इसके बोलनंवाले प्रमुखत: पोंवार' लोग हैं, इसीसे इसका यह नाम पड़ा है !*

भारत की स्वतंत्रता के बाद हुए जनगणनाओ में पोवारी के साथ पवारी नाम भी जुडा दीखता है ! पोवार लोग पोवारी का उच्चारण कभी कभी पवारी भी करते है ! परन्तु पवारी बोलने वालो की संख्या अचानक बढ़ी हुयी देखकर पवारी व् पोवारी दोनों बोलियों पर गौर करना होगा ! गियर्सन द्वारा किये गए पहले भाषा सर्वे में पोवारी व् पवारी दोनों बोलिया अलग अलग बतायी गयी है ! हालाकी पोवारी व् पवारी यह दोनों बोलिया पँवार / परमार राजपूतो द्वारा बोली जाने की बात कही गयी है ! परन्तु यह दोनों बोलिया पंवारो के अलग अलग समुदायों द्वारा बोली जाती है ! पंवार समुदायों द्वारा बोली जाने वाली बोलियों को स्वतंत्र भारत में हिंदी की उपबोली के रूप दर्शाया गया है व् दोनों बोली को एक ही बताया गया है !

जबकि भारत के पहले भाषा सर्वेक्षण में पवारी के बारे में निम्न लिखित उल्लेख है -

Pawari Bundeli of Datia and The neighborhood.

Pawari is the name of a variety of Bundeli which is spoken in those parts of the Gwalior and Bundelkhand in which Parmara or Pawar Rajputs are one of the Principal Clans . In the Bundelkhand Agency, it is spoken in the tract lying to the west of the Jhansi District which includes the state of Datia and the Alampur Pargana of the state of

Indore . In Gwalior it is spoken in the tract adjoining Datia ie. in the east of the Gird Gwalior and in the Bhander district of the state .
The number of its speakers is stated as follows:-

Bundelkhand Agency	*203,500*
Gwalior	*150,000*
Total	*353,500*

Pawari hardly differs at all from ordinary Bundeli . It has a few local peculiarities , most of which it shares with the Lodhanti just described .

<u>हिंदी अनुवाद --</u>

दतिया का और आसपड़ोस पवारी बुन्देली --

पवारी बुंदेली के एक किस्म का नाम है जो मध्य भारत के ग्वालियर और बुंदेलखंड के उन हिस्सों में बोली जाती है, जिनमें परमार या पवार राजपूत प्रमुख वंशो में से एक हैं। बुन्देलखण्ड एजेंसी में यह झाँसी जिले के पश्चिम में स्थित भूभाग में बोली जाती है, जिसमें दतिया राज्य और इंदौर राज्य का आलमपुर परगना शामिल है। ग्वालियर में यह दतिया से सटे भू-भाग यानी गिर्द ग्वालियर के पूर्व में और उस राज्य के भंडेर जिलों में बोली जाती है।

इसके बोलने वालों की संख्या इस प्रकार बताई गई है:-

बुन्देलखण्ड एजेंसी -	*203,500*
ग्वालियर	*150,000*
कुल	*353,500*

पवारी आम बुंदेली से जरा भी अलग नहीं है। इसकी कुछ स्थानीय विशिष्टताएँ हैं, जिनमें से अधिकांश लोधांति के साथ मिलती है।

पोवारी भाषा विशिष्टता व् स्वरूप

पोवारी पोवारो के इतिहास से सबंधित भी है ! पोवार जहा जहा गये वहा वहा के शब्द पोवारी में समाहित हुए ! परन्तु मूल भाषा का प्रारूप जस के तस रहा ! अगर आप पोवारी का गहन अध्ययन करेंगे तो पाएंगे की इसमें गुजराती व् राजस्थानी भाषाओ को मूल ढांचा इसमें मिलेगा ! पोवारी में संस्कृत , गुजराती, राजस्थानी , मालवी , अवधि , बुन्देली , बघेली , हिंदी आदि का मेल दिखाई पड़ेगा ! मराठी , उर्दू , अंग्रेजी व् स्थानीय भाषाओ के शब्द भी इसमें जुड़े हुये दीखते है !

डिंगल शैली में लिखे गये रासो , ख्यात , कहावते , फुटकर वाता आदि में लिखित काव्यो में जो भाषा है उसमे और पोवारी में समानता लगती है !

पोवारी की हरियाणवी , गढवाली से भी कुछ प्रतिशत साम्यता पायी जाती है !

पोवारी भाषा का संरचना व् सबंध को समझने हम कुछ उदाहरण लेते है जैसे -

हिंदी मेंबोलते है - आज बड़ी गर्मी है

वही पोवारी में - अज बड़ी उमस से !

संस्कृत में - अद्य अतीव उष्णम अस्ति !

गुजराती में -- अजे खूब ज गरमी छे !

हिंदी में बोलते है - क्या हुआ ?

पोवारी में - का भयौ ?

संस्कृत में - किमाभवत ?

गुजराती में -- सु थयु ?

हिंदी में बोलते है - अब मै जाता हु !
पोवारी में - आब मी जासु !
संस्कृत में - इदानी गच्छामि
गुजराती में - हवे हु जावू छु !

हिंदी में बोलते है - आप क्या कर रहे हो !
पोवारी में - तुमि का करसेव !
संस्कृत में - त्वं किम करोषि
गुजराती में - तमे शुं कर रह्या छो !

भयौ , सु , से , खन , माल्हे जैसे शब्द गुजरात राजस्थान व् मालवी भाषा का सबंध दिखाते है ! खास बात यह की मध्य भारत में अन्य स्थानीय लोग इन शब्दों का उपयोग नही करते !

हिंदी में कहते है - पतंग दीख नही रही ?
वही पोवारी में - पतंग चोव्ह नही ?
गुजराती में जोह्यव् जैसा शब्द है ! बाकी किसी भाषा में इस प्रकार का शब्द नही मिला !

ज्यादातर भाषाए संस्कृत से सबंधित है यह सभी जानते है !
पोवारी का भी कुछ संस्कृत सबंध लगता है -
संस्कृत में --- त्वं किम करोषि
पोवारी में ---- तुमि का करसेव !

पोवारी में स्त्रिया एकदूसरे को **"अये"** से सम्बोधित करती है ! यही शब्द प्राचीन संस्कृत ग्रंथो में स्त्रिया एकदूसरे को सम्बोधित करती हुयी मिलती है ! शायद ही कही ऐसा सम्बोधन आज भी प्रचलित होगा पर पोवारी में है !

पोवारी निमाड़ी , राजस्थानी व् गुजराती तीनो भाषा से थोड़ी थोड़ी सबंधित लगती है इसलिए अनुमान यह है की पोवार ऐसे स्थान में रहे है जिसकी सीमा गुजरात , राजस्थान , निमाड़ से जुडी हुयी है ! क्योंकि पोवारी न पूरी तरह गुजराती जैसी है न पूरी तरह राजस्थानी , न पूरी तरह निमाड़ी जैसे ! शायद इसीलिए भाषाविद गियर्सन पोवारो को पश्चिमी मालवा से आने की बात कहते है ! पश्चिमी मालवा यानि वही क्षेत्र है जिसकी सीमा गुजरात , राजस्थान , पूर्व मालवा से जुडी हुयी है ! पोवारी पर स्थानांतरण का बहुत असर है ! बघेलखंड का भी असर देखने का मिलता है !

अब भाषा में साम्यता व् फर्क को समझने हम निमाड़ी का उदाहरण देखते है जैसे -

पटील को छोरो अरु बावड़ी नहाई-घोइंन पूजा की थाल हाथ-मS लईन निकल्या । छोरो घोडा पर बठयो अन कुलवन्ती बहू गाड़ी-पर । सब 'गावता बजावता बावड़ी-पर गया, पूजा करी । न बावडी-मS दुई जोण 'जोडा-सी गया। पटिल दाजी ममता का मारे खूब रडन लग्यो।

---- सन्दर्भ कथा - बिरवा को तलाव - किताब - निमाड़ी और उनका साहित्य (१९६०)

इस लेख का पोवारी अनुवाद देखे -
पटिल को बेटा अना बहु नहाय धोयकर पूजा की थाल हाथ मा लेयकर निकल्या ! बेटा घोड़ो परा बस्यो अना कुलवंती बहु गाड़ी परा ! सब 'गावता बजावता बेहेर परा गया , पूजा करीन ! अन बेहेर मा दुई जण जोड़ा लक गया ! पटिल दाजी ममता को मारे खूब रोवन लग्या !

हिंदी अनुवाद -

पटेल का बेटा और बहु नहा धोकर पूजा की थाल हाथ में लेकर निकले! बेटा घोडे पर बैठा और कुलवंती बहु गाड़ी पर ! सब गाते बजाते कुए पर गये , पूजा की ! और कुए में दोनों जण जोडेसे गये ! पटिल दाजी ममता के मारे खूब रोने लगे !

पोवारी बोली सन्मानित लहजे के साथ मृदु भी है ! काफी समय मराठी व् हिंदी क्षेत्र में रहने से मराठी , हिंदी व् स्थानीय शब्द का उपयोग दिखायी पड़ता है ! जैसे पहले सब्जी को “स्याग” कहते थे अब पोवार लोग भाजी भी कहने लगे है ! भाजी मराठी शब्द है ! गावो में जानवरों में मुह को बाँधने के जालीदार बंधन को “मुस्का” शब्द उपयोग लाया जाता है ! यह शब्द मास्क जैसा लगता है ! अब समझ नही आता की पोवारो ने अंग्रेजो से यह शब्द लिया या अंग्रेजो में पोवारो से ! भाषा के बदलाव के लिए स्थान , संगत व् समय ये सब कारण होते है ! पुरानी पोवारी के जायखन,

खायखन शब्द अब बदलकर जायकन , खायकन हो गये है ! “वोको माल्ह” ये शब्द सौ सालो में बदलकर अब “वोको मा लक” हो गये !

मराठी क्षेत्रो में रहने वाले पोवारो की बोली पर मराठी का असर ज्यादा है! हिंदी क्षेत्र में रहनेवालो पोवारो की बोली पर हिंदी , मरारी , लोधी का असर दीखता है ! हालाकी मूल व्याकरण , मूल पोवारी का ढांचा एक जैसा ही है !

पोवारी में संस्कृत शब्द थोड़े अपभ्रंश के साथ दिखाए पड़ते है ! जैसे पहले बड़े बुजुर्ग लोग नक्षत्रो की जानकारी रखते थे ! वे संस्कृत में कहे गये नक्षत्र रोहिणी को रोहिनी, मृगशिरा को मिरूग , आर्द्रा   को   अरदळा   , पुनर्वसु को पुन्द्रूस, पुष्य को पूस कहते थे ! वे तिथियों को जानते थे ! वे आजकी नयी पीढ़ी तो नक्षत्र व् तिथि आदि भूल गये ! श्रीकृष्ण जन्माष्टमी की रात में जो अर्ध्य दिया जाता है उसे अर्क कहते है ! कुल को कुर कहते है ! कर्म को करम कहते है !

कुछ शब्द ऐसे होते है जो भाषा का इतिहास बता जाते है ! पोवारी विवाह गीतों में एक शब्द आता है “ दायजो” यानि विवाह में दुल्हन को मायके से व् उसके रिश्तेदारों से मिली भेट वस्तु ! पोवार समुदाय में प्रताड़ित करने वाली दहेज प्रथा नहीं परन्तु अपने मन से , इच्छा से माता पिता , सगे सबंधी दुल्हन को जीवनोंपयोगी वस्तुए , अलंकार , बर्तन आदि भेट में देते है ! और यह सबके सामने गीत गायन के साथ दिया जाता था ! छुपे तरीके से कोई दहेज देना व् मांगना समाज में अमान्य है ! किसी भी तरीके की मांग के कारण विवाह तोड़ दिए जाते है ! और भरी बदनामी हो

जाती है जिसके कारण ऐसा कोई करता भी नहीं ! यह सामान्य रूप वाला भेट वस्तु वाला दायजो है और यह शब्द मिलता है मारवाड़ , राजपुताना क्षेत्र में ! बाकि जगह दहेज यह शब्द प्रचलित है !
उदाहरण के लिए गुणवंती नामक राजस्थानी कविताओ के संग्रह में पृष्ठ २२ लिखित कुछ पंक्तिया कहती है -

बेटी लिखे पराण घर आई
सासू करे मखौल
नित्त कहे , कम मिल्यो दायजो
गिन गिन बोले बोल
अधुरो दीन्हो दायजो !!२५!!

यह दायजो शब्द मुनहोत नैनसी की ख्यात व् अन्य राजस्थानी साहित्य में लिखा मिलता है !
ऐसा ही एक शब्द है कांकन जो दुल्हन के हाथ में बाँधा जाता है ! यह कांकन बाँधने के प्रथा राजस्थान में है !

इसप्रकार भाषा में शब्दों के समावेश से भाषा व समाज का इतिहास समझ आता है ! जहा मध्य भारत के मराठी हिंदी क्षेत्र में पोवार रहते है वहा पोवारी में स्थानीय शब्द समावेषित होते है तो वह बात स्वाभाविक है, परन्तु कुछ शब्द स्थानीय भाषाओ में प्रचलित न होते हुए भी पोवारी बोली में होने से समझ आता है की पोवार इसके पहले उन क्षेत्रो में रहे है जहा उनके द्वारा उपयोग में लाये गए विशेष व् भिन्न शब्द प्रचलित है !

पोवारी बोली का प्रचलन

भारत की भाषाई विविधता केवल प्रमुख भाषाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें असंख्य क्षेत्रीय बोलियाँ और जातिगत भाषिक स्वरूप भी शामिल हैं। इन्हीं में से एक है पोवारी बोली, जो विशेष रूप से पोवार समुदाय में प्रचलित रही है। यह बोली न केवल संचार का साधन है, बल्कि समुदाय की सांस्कृतिक पहचान और ऐतिहासिक निरंतरता का भी वाहक है।

पोवारी बोली का उद्भम पोवार समाज से जुड़ा हुआ है। पारंपरिक रूप से यह बोली गाँवों के सामुदायिक जीवन में गहराई से रची-बसी थी। चौपाल, खेत-खलिहान, घरेलू परिवेश और पारिवारिक संवाद—सभी में पोवारी का प्रयोग होता था। विशेष तथ्य यह है कि यद्यपि यह बोली जातिगत है, फिर भी इसके संपर्क में आने वाले अन्य ग्रामीण समुदाय भी इसे सहजता से समझने और आंशिक रूप से प्रयोग करने में सक्षम होते है ! इससे यह स्पष्ट होता है कि पोवारी में आत्मीयता और सहज संप्रेषण की क्षमता विद्यमान रही है।

समकालीन परिदृश्य में पोवारी बोली का प्रयोग सीमित होता जा रहा है। शिक्षा और रोजगार के अवसरों की खोज में नई पीढ़ी का रुझान हिंदी, अंग्रेज़ी और मराठी की ओर बढ़ गया है।

परिणामस्वरूप, पोवारी का प्रयोग दैनिक जीवन में कम होता जा रहा है। इसके विपरीत, ग्रामीण अंचलों में विशेषकर गोंदिया जिले में, अभी भी अनेक वृद्धजन पूर्णतः पोवारी में ही संवाद करते हैं। उनका भाषिक संसार पोवारी तक ही सीमित है, जबकि युवा पीढ़ी के साथ संवाद में आंशिक हिंदी अथवा अन्य भाषाएँ सम्मिलित हो जाती हैं।

भाषा या बोली केवल संचार का माध्यम नहीं, बल्कि सांस्कृतिक धरोहर होती है। यह किसी भी समुदाय के इतिहास, परंपरा और अस्मिता का दर्पण होती है। पोवारी के संदर्भ में भी यही तथ्य लागू होता है। यदि इस बोली का लोप हो जाता है, तो पोवार समाज की सांस्कृतिक जड़ें भी कमजोर पड़ सकती हैं। यही कारण है कि वर्तमान में अनेक सामाजिक संगठन, साहित्यकार, कवि और गायक इस बोली के संरक्षण हेतु प्रयासरत हैं। लिखित रूप में पोवारी का संकलन और दस्तावेजीकरण इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है, क्योंकि लिखित भाषा पीढ़ी दर पीढ़ी सुरक्षित रहती है।

सन २०२५ के परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो पोवारी बोली अभी भी गोंदिया जिले सहित कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में जीवित है, किंतु इसका प्रयोग सिमटता जा रहा है। भाषाविज्ञान और समाजशास्त्र की दृष्टि से यह स्थिति बोली के भविष्य के लिए चुनौतीपूर्ण है। संरक्षण

के लिए सामुदायिक सहभागिता, साहित्यिक रचनाएँ, शैक्षणिक दस्तावेजीकरण और सांस्कृतिक आयोजनों में इसका प्रयोग आवश्यक है।

अतः यह कहा जा सकता है कि पोवारी बोली केवल एक जातिगत बोली नहीं, बल्कि पोवार समाज की पहचान और विरासत है। यदि इसे संरक्षित करने के लिए सामूहिक प्रयास किए जाएँ, तो यह बोली आने वाली पीढ़ियों में भी जीवित रह सकती है और समाज की सांस्कृतिक निरंतरता को बनाए रख सकती है।

अन्य भाषाओ के साथ साथ कमसे कम समाज की निजी बोली तो बोलते आनी ही चाहिए ऐसी बुजुर्गो की अपेक्षा है !

पोवारी भाषा संरक्षण

भगवान श्रीकृष्ण द्वारा भगवत गीता के तृतीय अध्याय कर्मयोग में कहा गया एक सुन्दर श्लोक है -

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ॥ ३५ ॥

श्रीकृष्ण कहते है- अच्छी प्रकार से आचरण में लाये हुए दूसरे के धर्म से गुण रहित अपना धर्म भी अति उत्तम है। अपने धर्म में तो मरना भी कल्याण कारक है और दूसरे का धर्म भय को देने वाला है ।। ३५ ।।

यह श्लोक केवल धार्मिक कर्तव्यों तक सीमित नहीं है, बल्कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में लागू होता है। विशेषतः भाषा के संदर्भ में यह और भी प्रासंगिक प्रतीत होता है।

जिस प्रकार स्वधर्म मनुष्य के लिए सहज और नैसर्गिक होता है, उसी प्रकार मातृभाषा भी हमारे व्यक्तित्व का अभिन्न अंग है। हम उसी में सोचते हैं, उसी में भावनाएँ सहज रूप से प्रवाहित होती हैं, और उसी के माध्यम से हम स्वयं को प्रकट करने में पूर्णत: सक्षम होते हैं। जब हम अपनी मातृभाषा में बोलते हैं, तो शब्द केवल उच्चारण मात्र नहीं रहते, बल्कि वे हमारे अनुभवों, संस्कारों और आत्मीय भावनाओं से ओतप्रोत हो उठते हैं।

इसके विपरीत, जब हम किसी अन्य भाषा का प्रयोग करते हैं, तो वह कभी न कभी कृत्रिमता का आभास कराती है। निस्संदेह अन्य भाषाओं का ज्ञान आवश्यक और उपयोगी है, किंतु उनमें सहजता और आत्मीयता उसी स्तर की नहीं हो सकती जो मातृभाषा में होती है। यही कारण है कि अनेक लोग विदेशी भाषाओं में बोलते समय संकोच और भय का अनुभव करते हैं।

भाषा केवल संचार का माध्यम नहीं, बल्कि पीढ़ी-दर-पीढ़ी संचित हुई सांस्कृतिक विरासत है। माता-पिता से, परिवार और समाज से प्राप्त भाषा हमारी आत्मा का अभिन्न हिस्सा होती है। यह हमारे पूर्वजों की स्मृति और सृजनशीलता का परिणाम है। इसमें उनके गीत, उनकी कथाएँ, उनके अनुभव और उनके जीवन-मूल्य समाहित रहते हैं। अतः इसकी उपेक्षा करना अपने स्वधर्म की उपेक्षा के समान है।

गीता का यह श्लोक हमें स्मरण कराता है कि जैसे अपने धर्म का पालन करना सर्वोत्तम है, वैसे ही अपनी मातृभाषा का सम्मान और प्रयोग करना भी उतना ही आवश्यक है। किसी अन्य भाषा को अपनाना उपयोगी हो सकता है, परंतु यदि उसमें अपनेपन और सहजता का अभाव है, तो वह केवल बाहरी आडंबर रह जाता है।

मातृभाषा का महत्व अमूल्य है, क्योंकि वही हमें हमारी जड़ों से जोड़ती है। यदि हम अपनी भाषा को भूल जाते हैं, तो केवल शब्द ही नहीं खोते, बल्कि अपनी सांस्कृतिक पहचान और ऐतिहासिक निरंतरता से भी दूर हो जाते हैं।

भगवान श्रीकृष्ण का उपदेश केवल धार्मिक मर्यादा तक सीमित नहीं, बल्कि जीवन का सार्वभौमिक सत्य है। जिस प्रकार स्वधर्म का पालन मनुष्य को भय से मुक्त कर कल्याण की ओर ले जाता है, उसी प्रकार अपनी मातृभाषा का संरक्षण और प्रयोग भी हमें आत्मीयता, आत्मविश्वास और सांस्कृतिक गर्व प्रदान करता है।

स्वभाषा के प्रति जागृत विश्व स्तरीय चेतना –

पिछले कुछ दशकों में भाषाई संरक्षण को लेकर विश्व स्तर पर नई चेतना का उदय हुआ है। यह समझ विकसित हो रही है कि भाषा मानव सभ्यता और संस्कृति का अमूल्य धरोहर है। प्रत्येक भाषा अपने भीतर एक विशिष्ट विश्वदृष्टि, सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक प्रतीक और जीवन-दर्शन समेटे होती है। जब कोई भाषा विलुप्त होती है, तो केवल शब्द ही नहीं मिटते, बल्कि एक पूरी जीवन-पद्धति, ज्ञान-परंपरा और सांस्कृतिक स्मृति भी खो जाती है।

इस गहन संकट को देखते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ (United Nations) ने वर्ष २०२२ से २०३२ तक के दशक को “अंतरराष्ट्रीय स्वभाषा दशक” (International Decade of Indigenous Languages) के रूप में प्रायोजित किया है। इसका उद्देश्य उन भाषाओं को संरक्षित करना है जो धीरे-धीरे मृतप्राय स्थिति की ओर बढ़ रही हैं। इस पहल के अंतर्गत विश्व के विभिन्न देशों में बहुभाषिकता के महत्व को रेखांकित करने, भाषाओं के

दस्तावेजीकरण, संरक्षण और पुनर्जीवन के प्रयासों को प्रोत्साहित किया जा रहा है।

भाषाविदों, दार्शनिकों और सांस्कृतिक विचारकों का मत है कि भाषाएँ मानव सभ्यता की सामूहिक धरोहर हैं। इनकी विविधता ही विश्व-संस्कृति को रंग-बिरंगा और समृद्ध बनाती है। विभिन्न भाषाओं का अस्तित्व "विविधता में एकता व् सुन्दरता " के सिद्धांत को मूर्त रूप प्रदान करता है।

भिन्न भाषाओं का शब्द-संग्रह केवल भाषाई धरोहर नहीं, बल्कि अनुभवों, लोक-ज्ञान, विज्ञान, कला और दर्शन का संचित कोष है। उदाहरणार्थ, अनेक स्वदेशी भाषाओं में ऐसे शब्द और मुहावरे मिलते हैं जो प्रकृति के साथ गहरे संबंध को अभिव्यक्त करते हैं—जिनका अनुवाद किसी अन्य भाषा में संभव नहीं। इस प्रकार भाषाएँ मानवता की सामूहिक स्मृति और प्राकृतिक चेतना को संरक्षित करती हैं।

यह तथ्य निर्विवाद है कि विविधता में ही सौंदर्य है। जैसे फूलों का बगीचा केवल एक ही रंग से नहीं, बल्कि अनेक रंगों और सुगंधों से आकर्षक बनता है, वैसे ही मानव संस्कृति भी अनेक भाषाओं और उपभाषाओं की सहअस्तित्व से जीवंत रहती है। यदि भाषाई विविधता नष्ट हो गई, तो मानवता की सांस्कृतिक छवि नीरस और अपूर्ण हो जाएगी।

स्वभाषा के संरक्षण का महत्व

भाषा मानव समाज के सांस्कृतिक, सामाजिक और भावनात्मक ताने-बाने की आधारशिला है। विशेष रूप से स्वभाषाएँ व्यक्ति और समुदाय के मध्य संबंधों को प्रगाढ़ करती हैं। उदाहरणतः भारतीय भाषाओं का वैशिष्ट्य यह है कि इनमें प्रत्येक पारिवारिक रिश्ते के लिए विशिष्ट शब्द मिलते हैं, जो अन्य भाषाओं, विशेषकर अंग्रेज़ी में प्रायः अनुपस्थित हैं। इस दृष्टि से भारतीय भाषाओं का शब्द-भंडार अत्यंत समृद्ध और अद्वितीय है।

स्वभाषाओं में केवल माधुर्य और भावनात्मक गहराई ही नहीं, बल्कि इतिहास और परंपरा भी निहित है। ये भाषाएँ सदियों से चले आ रहे सांस्कृतिक विकास और जीवन-यात्रा की साक्षी हैं। इनमें बड़ों का प्रेम, उनकी शिक्षाएँ तथा परिवार और समाज का अपनापन समाया हुआ है। साथ ही, भारतीय संस्कृति और जीवन-दर्शन की पावन झलक भी स्वभाषाओं में परिलक्षित होती है।

यदि समय के प्रभाव से स्वभाषाएँ लुप्त होती चली गईं, तो इससे हमारी सांस्कृतिक विरासत, परंपराएँ और भारतीयता का मूल सुन्दर स्वरूप भी संकट में पड़ सकता है। वास्तव में, अपनी मातृभाषा व्यक्ति को न केवल अपने अतीत से जोड़ती है, बल्कि भविष्य के निर्माण के लिए भी प्रेरणा देती है।

इसी परिप्रेक्ष्य में पोवारी बोली का संरक्षण अत्यावश्यक है। वर्तमान समय में इस बोली में साहित्य-निर्माण की पहल आरंभ हुई है, जो न केवल भाषाई विविधता को संरक्षित करेगी, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए अमूल्य धरोहर सिद्ध होगी।

<u>पोवारी भाषा के नमूने</u>

- **उज्जयनी को पोवार साम्राज्य को त्याग करके योगी बन्या भरतरीनाथ** कसेत --

वयमिह परितुष्टा वल्कलैस्त्वं दुकूलैः
सम इव परितोषो निर्विशेषो विशेषः।
स तु भवति दरिद्रो यस्य तृष्णा विशाला
मनसि च परितुष्टे कोऽर्थवान् को दरिद्रः।।४५।।

अर्थात
आमी योगी लोग झाड़ की छाल लक बनायव वल्कल वस्त्र लक च समाधानी होय जासेजन अना तुमी उत्तमोत्तम कीमती कपड़ा लक सन्तुष्ट होसेव।
येन प्रकार लक आमरो- तुम्हरो सन्तोष मा अन्तर नही होन को कारण विशेष असो भेद बी नाहाय।
परन्तु जेन व्यक्ति की धन को लोभ , भूख अति ज्यादा से वु व्यक्ति दरिद्र को दरिदर च रहे जासे , काहे कि मन असन्तुष्ट से त मंग कौन धनवान् अना कौन दरिदर कहैव जाहे ? ।४५।

- **<u>वेद इनमा वर्णित गायत्री मंत्र</u>**

ॐ भूर्भुवः स्वः। तत् सवितुर्वरेण्यं, भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ।।

पोवारी मा भावार्थ

वोन प्राणस्वरूप, दुःखनाशक, सुखस्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पापनाशक, देवस्वरूप परमतत्व ला आमी आपरो अन्तरात्मा मा धारण करसेजन । वा परम शक्ति आमरो बुद्धि ला सन्मार्ग को तरफ प्रेरित करे।

ऋग्वेद मनुष्य को चिंतन की पयली ज्ञात कृति आय। येन ऋग्वेद मा गायत्री मंत्र को रुपमा सकारात्मकता व देवत्व धारण करन को प्रति मनुष्य मा अप्रतिम भाव , इच्छा को उल्लेख चोव्हसे।

मनुष्य मा देवत्व को निर्माण को प्रयत्न प्राचीन समया लक चल रही है।

देवत्व धारण करन की हर पीढ़ी न कोशिश करनला होना।

देवत्व यानी उत्तमता, श्रेष्ठता , मनुष्यता की ऊँचाई आय । देवत्व की कल्पना आमरो लायी जीवन को आदर्श लक्ष्य आय जहा आमला पहुँचनो से।

व्यक्ति निर्माण कार्यक्रम को द्वारा यव सम्भव से। सिर्फ मंत्र को पाठ करके देवत्व को उदय नही होनको, बल्कि मंत्र को अर्थ ध्यान मा राखके आमला खुद मा परिवर्तन करन की आवश्यकता रहे । विकार इनको संग लडनो पड़े। विकार समाप्त करके स्वयम मा देवत्व की ज्योति जलवाबीन तब आमी सही मायना मा गायत्री मंत्र ला समझ्या असो कवता आये।

परम तत्व सबको अंतरात्मा मा देवत्व को प्रकाश प्रज्वलित करे!

- <u>जीवनशैली को बारामा राजा भोज का बिचार</u>

राजा भोजको अनुसार आदर्श जीवन वु आय जहा नीतिमत्ता, आयुर्वेद अना धर्मशास्त्रको प्रतिदिन पालन होत रव्हसे ।
उनको चारुचर्या येन ग्रन्थमा आदर्श जीवन को बारामा उल्लेख आव से ।

जीवन शैली को बारामा राजा भोज नहान नहान बात परा ध्यान देसेत। राजा भोज को अनुसार सज्जन अना राजपुत्रइनला आपरो दैनिक जीवनमा आदर्श तरीकालक रव्हनो जरूरीसे।

◆ रोज झुंझुरका शौच को बाद दांत साफ करनला होना। वोकोबाद आंग धोय के शरीर शुध्दि करनला होना।
◆ गंदा, मैला कपडा, गीला, दुसरो को कपड़ा , फ़ट्या कपडा, जरैव अना उन्द्रा न खाइस कपडा नहीं पेहरनला होना।
◆ आपरो वैभवको अनुसार आभूषण पेहरनला होना। आभूषणको कारण पवित्रता, प्रसन्नता, सौभाग्य, आत्मविश्वास , आयु अना धन की वृध्दि होसे।
◆ऋतु को अनुसार विविध फूल और लेप शरीरला लगावनला होना । शरीर अना कपड़ा परा सुगंधित द्रव्य लगावन ला होना।
◆मनुष्यला सदाचार लक परिपूर्ण होनला होना ।
◆प्रतिदिन देवता, पितरइनको पूजन करन को पश्चात मातापिता चरण दर्शन करके भोजन करनला होना।

◆ राजा भोज की अनुसार पराई स्त्री, निन्दाबधी, अमित्रतापूर्ण बचन, कड़वी बाणी, आड़माई संग गलत बातचीत, असत्य, द्रोह, विश्वासघात, पतित लोगइनकी संगति, क्रोध, आत्मप्रशंसा आदि को त्याग करनला होना।

◆राजा भोज को अनुसार प्राण संकट मा पड़ जाए तब भी असत्य नहीं बोलन ला होना। सत्य अमृत आय, असत्य विष आय।

◆आध्यात्मिक शास्त्र अना अच्छी बात वाली किताब बाचन ला होना तथा ध्यान साधना करनला होना। आलस न करता आपरो कर्म मा सदा मगन रव्हनला होना।

◆मनुष्यला संध्या-वंदन आदि करके कुलाचार करनला होना।

◆ सूर्यकी पूजन ध्यान आराधना करेलक सब बीमारी नष्ट होय जासे।

◆दान, तीर्थ यात्रा अना उपवास द्वारा धर्म को संग्रह करनला होना।

◆ माता-पिता, सगा-संबंधि, देवता, भाइबंध , रिश्तेदार, घर का पशु आदि सबको प्रति आपला कर्तव्य पूरा करके वय प्रसन्न रहैत असो आचरण अना कर्म करनला होना।

◆गुरु, शिक्षक , विद्वान को आदर करनला होना।

◆विद्वान अना सज्जनइनकी संगत करनला होना ।

◆गरीब, अंधरा, दुखी (असहाय), तपस्वी आदि ला सहायता करनला होना ।

◆ जीवनमा विद्या , कला ,ज्ञान प्राप्त करनकी पूरी कोशिश करनला होना ।

◆जीवन धर्म ,नीति, क्षत्रियता , सज्जनता, अध्यात्म , कृतज्ञता, कर्मण्यता, आनंद, प्रसन्नताको संग व्यतीत करनला होना ।

- **<u>वीर सम्राट् विक्रमादित्य</u>**

'तत्कृतं यन्न केनापि तद्दत्तं यन्न केनचित्, तत्साधितमसाध्यं यद्विक्रमार्केण भूभुजा ।।

अर्थात् सम्राट् विक्रमादित्य न असो कार्य करिस जो कोनि नही कर सकेव , असो दान देईस जो कोनि नही देय सकैव अना असी कार्य-सिद्धि प्राप्त करिस जो दूसरो कोनी लाय असम्भव होथों !!
.......- कथासरित्सागर ग्रंथ

विक्रमादित्य को व्यक्तित्व भारत मा दृढ़ , मजबूत अना दूरदर्शी प्रकाश स्तम्भ को समान से । भारत भूमि को येन अग्नि को समान तेजस्वी वीरपुत्र को च यव प्रताप आय कि आमी अज आपलो सामने प्राचीन सनातन धर्म को वर्तमान अस्तित्व देख रह्या सेजन। मानव रक्त का प्यासा, ताकतवर, अस्त्र-शस्त्र लक समृद्ध, पशु-तुल्य, हिंसक, आतंकित,कम्पित करनो मा समर्थ, मदोन्मत्त-बर्बर अगणित शक सैनिकइनको उनन आपली चमचमाती खड्ग लक समूल संहार करिन। उनको महाशक्ति , महा विजयको डंका वोन समया समस्त संसारमा बजैव अना उनको दिग्विजयको उपलक्ष्यमा संसारको सर्वश्रेष्ठ अना सबदून अधिक दीर्घकाल प्रचलित विक्रम संवत को संस्थापन उनन करीन !

वीर विक्रमादित्य महान अना आदर्श शासक को गुणलक युक्त होता। उनला लोगइनन देईन अनेक उपाधि को कारण उनको अदभूत व्यक्तित्व समझ आवसे।

सम्राट विक्रमादित्य को समया मा पूरो दुनिया मा उनकी उदारता , वीरता , शासन , न्याय व ऐश्वर्य प्रख्यात होतो । एको बावजूदबी उनको मनमा थोड़ोभी अहम नोहतो । महान , शक्तिशाली, ऐश्वर्य वान ,अखंड भारत को सम्राट होनको बावजूद बी सम्राट विक्रमादित्य आपलो निजी जीवन मा बिल्कुल साधो तरीका लक रव्हत । विक्रमादित्य जमीन पर चटाई पर सोवत । माटी को हांडी पारा मा शुद्ध शाकाहारी अन्न पकायकर साधु को समान खात । खुद ला प्रजा को प्रति समर्पित करने वाला सम्राट विक्रम निश्चित तौर परा महान व आदर्श असा अद्वितीय शासक होता।

वय अनाथ बाल बच्चालाय पितासमान होता, जिनका कोणी भाई बंध नोहोता उनका बन्धु होता, अना प्रजा का परम मित्र होता, सर्वस्व होता ।

सम्राट विक्रमादित्य की तुलनामा इतिहास मा कोनी नहीं चोवत जो जनमानस को जुबान परा अजलक सिंहासन बत्तीसी , विक्रम बेताल की कहानी को रूप मा अस्तित्वमा सेत।
जब सारी धरती आततायिइनको अत्याचार लक कांप उठी होती, अनेक राजा भयभीत होयकर जंगल मा पराय गया होता, सब तरफ जनमानस को हाल बेहाल होता, तब वोन भयानक समयामा वैदिक धर्मकी रक्षा लाई   एक मात्र युवा, आदर्श, धर्म स्वरूप योद्धा वीर विक्रमादित्य न

आपलो कर्तव्य निभावन लाय शस्त्र धारण कर समस्त प्रजाला भयमुक्त करि होतीस।
पश्चिमी जगत को पुरानो जमाना लिखेव इतिहास मा वीर विक्रमादित्यइनला पोवार होनो लिखेव मिल से ।

अखंड विस्तृत भारतका सम्राट पोवार वंश का महान पुत्र वीर विक्रमादित्य सदा वंदनीय रहेती, वय हर पीढ़ी लाय प्रेरणादायी रहेती।
(संकलित सन्दर्भ लेख का सम्पादित पोवारी अनुवाद)

◆ आत्मज्ञान को प्रति अनास्था कोनला रव्हसे ◆

असुर प्रवृति का लोग अज्ञान लक परिपूर्ण रव्हसेत । परम तत्व को प्रति उनकी अनास्था या द्वेष अज्ञान को कारण निर्माण होसे । वय आपलो बराबर दुसरो ला बी भ्रमित करसेत । अज्ञानी लोग इनला मालूम नही रव्ह की जीवन को कल्याण स्वयम को वास्तविक पहचान कर लेनो मा से ।

या बात ईशोवस्यापनिषद मा उल्लेखित से । मंत्र असो से की ---

असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः।
तास्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः।। ३।।
------ ईशावास्योपनिषद

भावार्थ ---

असुर प्रवृति का लोगइनको दिमाग मा आत्मतत्व सबंधित अदर्शनरूप अज्ञान भरेव रव्हसे।

ये आत्मतत्व ला न मानने वाला लोग अज्ञानमा च मृत्युला प्राप्त होय जासेत !

अज्ञान को अँधारो मा रव्हनको कारण , उनला आपरो आत्मरूप प्रकाश की वास्तविक दर्शन नही होय सक !

आत्मतत्व ला न समझने वाला अज्ञानी मृत्यु को पहले ज्ञानमय जीवनमुक्त स्थिति मा नही पहुच सकत!

मून असुर प्रवृत्तिको लोगइनलक सज्जन व्यक्ति न दूर रव्हनला होना । उनको संगद्वारा अज्ञान को अलावा काइ नही मिल सक।

संग असो होना जेको लक ज्ञान की प्राप्ति होये अना जीवन को कल्याण होये ।

समाज चिंतन

मनुष्य केवल एक जैविक प्राणी नहीं , बल्कि वू एक सामाजिक प्राणी भी आय ।

समाज की आत्मा समाज की विशिष्ट संस्कृति रवसे।

कोनतो भी देश, समाज या समुदाय की पहचान वोकी संस्कृति लक होसे- जेको मा रीति-रिवाज, परंपरा, बोली भाषा, कला, लोक संगीत, नृत्य, त्योहार, आचार-विचार, पूजन पद्धति अन नैतिक मूल्य शामिल रवसेत।

सांस्कृतिक मूल्यइनको जतन (संरक्षण) करनो न केवल आमरी पहचान ला सुरक्षित राखन लाय आवश्यक से , बल्कि भावी पीढ़िइनला एक सशक्त आधार देन लाय भी जरूरी से ।

सांस्कृतिक मूल्य समाज को नैतिक अन व्यवहारिक ढाँचा ला गढ़सेत। वय मूल्य निर्धारित करसेत कि आमी एक-दूसरो संग कसो व्यवहार करसेजन, आमरो रिश्ता इनमा केतरी गरिमा रव से , आमी जीवन ला कोन दृष्टिकोण लक देखसेजन। आमरा जीवन मूल्य न केवल आमला अतीत लक जोड़सेत, बल्कि वर्तमान मा आमला मार्गदर्शन देसेत अन भविष्य लाय दिशा प्रदान कर सेत ।

पोवारी भाषा के मंगल गीत

पोवारी बोली में वैवाहिक दस्तूरो पर मंगल गीत गाए जाते है ! इन गीतों में पुराने समय की झलक दिखायी पडती है ! अयोध्या के श्रीराम व् देवी सीता के आदर्शो के प्रति आदर व् आस्था का दर्शन इन गीतों में होता है ! वही वर को राजकुवर कहकर राजा के बेटे होने की बात कही जाती है !
उदाहरणतः

कोन गाँव की आई बरातऽ
अयोध्या गाँव की आई बरातऽ
झलमा पर्दा की आई गुडुर
लोखंड की असकुड़ माय किस धूर।
बैल जुपीसेत धवल पवन
धुरकोरी बसी सेत राजकुँवर
अपरी माय का आतीन बार
हाथ मा धरी सेत ढाल तलवार।
गाँव को आखर पर आमा की अमराई।
वहाँ उतरयो राजा को रनवास।
राजा को रनवास खेल से गोटी।
पिता सोप अपरी बेटी।
सोनिया ची आढ़नी भौर ठाट।
चल ओ बाई जेवन ला दूध का भात।
बटकी को दूध भात बटकी मा रह्यो।
राजकुँवर परनू आयो पिता बेटी सोपन लगयो।

राजा जनक बोलतो भयो बुलाओ गाँव को भाली।
आईन हमरा सजन समधी करो पाय पानी।

जीवन में प्रत्येक बात का दाम देनेकी सीख माता अपने बेटे को देती है ! यानि फोकट की कोई चीज लेना ठीक नही यह विवाह गीतों में बताया गया है ! भलेही इन गीतों की गायन शैली व् शब्दों पर स्थानीय असर साफ़ दीखता हो , परन्तु सोच बड़ी महत्वपूर्ण है ! --

परनू जासे परायो देश!
अलसी फूल,चना फूल,चईत मास,
अगा बाऱ् परनू जासे परायो देश |धृ.।
परायो देश मोरी माय, कसो जाऊ ओ ?
परदेश दाम देजो बाऱ्, परदेश जाई जो ||१||
परायी सीव मोरी माय, कसो खुंदु ओ ?
सीव दाम देजो बाऱ्, सीव खुन्दी जो ||२||
परायो आखर मोरी माय, कसो चापु ओ?
आखर दाम देजो बाऱ्, मान्डो चापि जो ||३||
परायो जानुसा मोरी माय, कसो जाऊ ओ ।
जानुसा दाम देजोबाऱ्,जानुसा जाईजो।।४।।
परायो हल्दी मोरी, माय कसो लगाऊ ओ ।
हल्दी दाम देजो बाऱ्, हल्दी लगाहेजो।।५।।
परायो पानी मोरी माय, आंग कसो धोऊ ओ ?
पानी दाम देजो बाऱ्, आंग धोई जो ||६||
परायो ओसरी मोरी माय, कसो खुंदु ओ ।
ओसरी दाम देजो बाऱ्, ओसरी खुन्दी जो ||७||

परायो बनवत मोरी माय, कसो खाऊ ओ।
बनवत दाम देजो बाए, बनवत खाई जो ||८||
परायो कनगुली मोरी माय, कसो धरू ओ।
कनगुली दाम देजो बाए, कनगुली धरी जो ||९||
दादाजी को आंगन मा, चांदन की डेरऽ
चंदन की डेरीला, बांधी रेशम की डोरऽऽ
रेशम की दोरीला, लगी से सोनो की खुरी
खुरीला बांधीसे, गाय की दोरी
राम सीता को गरो मा, पडीसे सूम दी दोरी ||१||

इस गीत में वर वधु को राम सीता की उपमा दी गयी है !

यह गीत कैसे बने , किसने लिखे पता नही चल पाता , परन्तु यह गीत सिवनी , बालाघाट , गोंदिया भंडारा जिलो में बसे पोवारो में एक रूपता के साथ से प्रचलित है ! इनमे बदलाव नही ! इस कारण यह समझा जा सकता है यह संस्कृति इनके एक साथ रहने के दरम्यान विशेष रूप से स्थानीय प्रभाव के साथ विकसित हुयी है ! करीब १७० दुरी तक यह गीत एक से है जबकि उस समय आने जाने की सुविधा नही थी ! गाव के गाव में इन गीतों का प्रसार अन्य जातियों में नही हुआ ! सम्भवतः क्षेत्र में जातिगत मंगल गीत प्रचलित थे !

पोवारी साहित्य नवनिर्माण

पोवारी साहित्य का नव निर्माण कोरोना काल के समय मिले वैश्विक व् सामाजिक अवकाश में शुरू हुआ ! लोग जुड़े , मंच बने व् साहित्य निर्माण का कार्य हुआ ! पूर्वकाल की अपेक्षा इस समय डिजिटल क्रांति व् सोशल मिडिया सम्पर्क सुविधा के कारण साहित्य निर्माण को गति मिली ! पोवारी बोली घरो में सिमटने लगी है व् दिनोदिन खत्म हो रही है और उसे साहित्य रूप में बचाए रखना होगा यह भावना भी साहित्य नव निर्माण के पीछे का कारण है !

जब पोवारी साहित्य बन रहा है तो वह उत्कृष्ट हो यह आवश्यक है ! ऐसा साहित्य निर्माण होना जरूरी है जैसे संस्कृत साहित्य है! संस्कृत साहित्य की समृध्द सम्पदा है जैसे

संस्कृत साहित्य के प्रकार -

मीमांसा, स्मृति, श्रुति, काव्य, ग्रन्थ, टिका, सूत्र , व्याकरण, भाष्य, वेदांत, शास्त्र, महाकाव्य, कथा, उपनिषद, वेद, पुराण, स्तोत्र, ब्राह्मण, संहिता, आगम , दर्शन, विज्ञान, गीता, सिद्धांत, आरण्यक, सांख्य, कारिका, माहात्म्य, स्तुति, शतक,कोश,आख्यान, नीति, गाथा, वृत्ति, वर्तिका,सूक्ति, विद्या , अष्टाध्यायी, वाक्यपदीय, सार, शब्दावली, नाट्य, लघुकाव्य, लेख, सप्तशती, सुभाषित, खण्डकाव्य, चरित्र, रहस्य, मंजरी, चिंतामणि,

कादम्बरी, जातक, तंत्र, कम्पू, छंद, रत्नमाला, उपदेश, संग्रह, भागवत आदि
संस्कृत साहित्य से पोवारी व् अन्य भाषाओ के साहित्य के निर्माण में निश्चित रूप से सहायता मिल सकती है !

भाषाये लिखित रूप में रहेगी तो वे अवश्य भविष्य में सन्दर्भ के लिए अस्तित्व में होगी ! क्योंकि कुछ वर्षो में इन मरती हुयी भाषाओ का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा ! इसलिए काफी पोवार भाषिक लोग अपनी बोली को गद्य व् पद्य रूप में सहेजने में लगे है ! इस समय कुछ मंच अच्छा कार्य कर रहे है ! यह आवश्यक है की यह साहित्य शुद्धता के साथ निर्माण हो ! उसमे मिश्रण न हो ! पोवारी का वास्तविक रूप उसके पुराने रूप में ही हो यह जरूरी है !

पुस्तक समापन

प्राचीन समुदाय समय के प्रभाव में बदलते बदलते कहा पहुच जाता है यह इसका उदाहरण यानि पोवार समुदाय कह सकते है ! इस पुस्तक में इतिहास की खोज करते समय जो पाया वह प्रस्तुत करने की कोशिश की है ! शोधक व्यक्ति और भी गहराई से प्राचीन ग्रंथो में वर्तमान की जड़े खोज सकता है ! ऐसे शोधको के लिए यह पुस्तक सहायक होगी ऐसी आशा है ! वर्तमान की कड़ी अतीत में कहातक है यह कहना बड़ा कठिन है ! यहा अनेक संदर्भो से प्राचीन समय के तथ्य निकालने की कोशिश की है !

परमार या पोवार या पंवार वंश पर अनेक इतिहासकारों ने शोध किये है और विशेष रूप से किताबे लिखी है ! उसी कड़ी में यह एक और कोशिश है जिसमे यह अतीत का विश्लेषण करने का प्रयत्न मात्र है !



महेन पटले
